mÙkj çns'k fo/kku lHkk

ds

egRoi.k fo/kk;u

'kk/k ,o lUnHk 'kk[kk

fo/kku iLrdky;

fo/kku lHkk lfpoky;

mRrj in'k

2017

प्रकाशक :
विधान सभा सचिवालय,
उत्तर प्रदेश
विधान भवन, लखनऊ

प्रथम संस्करण : 2017

© सर्वाधिकार सुरक्षित

end
प्रकाश पैकेजर्स
257—गोलागंज, लखनऊ—226018
दूरभाष : 0522—2200425

çLrkouk

भारत विश्व में सबसे बड़ा संसदीय लोकतांत्रिक देश है और वही स्थान भारत के समस्त प्रदेशों में उत्तर प्रदेश का है। भारत के संसदीय इतिहास में उत्तर प्रदेश विधान सभा का बहुत ही गौरवशाली एवं महत्वपूर्ण स्थान है। उत्तर प्रदेश में विधान सभा की स्थापना से लेकर वर्तमान तक उससे संबंधित घटनाओं ने पूरे देश का ध्यान समय–समय पर अपनी ओर आकृष्ट किया है। यही नहीं, उसने देश की संसदीय प्रणाली को समय–समय पर नई दिशा भी प्रदान की है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत के संविधान के तहत अब तक राज्य में 16 विधान सभाओं का गठन किया जा चुका है। सम्प्रति 16वीं विधान सभा प्रदेश में कार्यरत है जिसका कार्यकाल समाप्ति पर है। उत्तर प्रदेश विधान मण्डल में जनहित के ऐसे अत्यंत महत्वपूर्ण प्रस्ताव एवं अधिनियम पारित किये गये जिनसे सामाजिक न्याय एवं आर्थिक विकास सम्भव हो सका है। प्रस्तुत पुस्तक में प्रदेश में प्रथम विधान सभा से सोलहवीं विधान सभा के मध्य उत्तर प्रदेश विधान सभा द्वारा पारित महत्वपूर्ण विधायनों का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया गया है। मैं इस पुस्तक के प्रकाशन में प्रमुख सचिव, विधान सभा श्री प्रदीप कुमार दुबे द्वारा दिये गये सकारात्मक एवं रचनात्मक सहयोग की सराहना करता हूँ।

आशा है यह पुस्तक उत्तर प्रदेश के संसदीय इतिहास में रूचि रखने वाले पाठकों एवं शोधकर्ताओं के लिये उपयोगी एवं महत्वपूर्ण सिद्ध होगी।

ekrk izlkn ik.Ms;
अध्यक्ष
उत्तर प्रदेश विधान सभा।

लखनऊ
23 फरवरी, 2017

Hkfedk

ऐतिहासिक दृष्टि से भारत में संसदीय लोकतंत्र की स्थापना में उत्तर प्रदेश की एक विशिष्ट और महत्वपूर्ण भूमिका रही है। सन् 1861 में निर्मित 'इंडियन काउंसिल एक्ट' कानून के अन्तर्गत नार्थ वेस्टर्न प्रोविन्स एण्ड अवध के लिये लेजिस्लेटिव काउंसिल की स्थापना हुई एवं उसके पश्चात् इस दिशा में उत्तरोत्तर प्रगति होती रही जिसका स्वरूप आज उत्तर प्रदेश को सोलहवीं विधान सभा के रूप में विद्यमान है तथा सत्रहवीं विधान सभा की ओर अग्रसर है। यह एक लम्बी यात्रा रही है तथा इस दौरान उत्तर प्रदेश विधान मण्डल में अत्यन्त महत्वपूर्ण संसदीय परम्परायें स्थापित हुईं जिनका दूरगामी परिणाम भी हुआ तथा जिन्होंने सम्पूर्ण देश की राजनीतिक धारा को समय–समय पर नया मोड़ तथा क्रान्तिकारी दिशा दी है।

एक सफल संसदीय राज्य व्यवस्था वह है जो गतिशील हो तथा राज्य के समक्ष आने वाली अनेक समस्याओं के निराकरण के लिये निरंतर प्रयत्नशील रहे। यह एक सर्वमान्य तथ्य है कि कानून, समाज और राज्य व्यवस्था में परिवर्तन लाने का एक सशक्त साधन है। उत्तर प्रदेश विधान सभा ने विशेष रूप से सामाजिक कल्याण के क्षेत्र में बड़ी संख्या में कानून अधिनियमित किये। जिनमें से यू०पी० मिनिस्टर्स सैलरीज ऐक्ट, 1937, यू०पी० लेजिस्लेचर आफीसर्स सैलरीज ऐक्ट, 1937 यू०पी० लेजिस्लेटिव चेम्बर्स (मेम्बर्स इमालुमेण्ट्स) ऐक्ट, 1938, जमींदारी एबोलिशन एण्ड लैण्ड रिफार्म ऐक्ट, 1950, उत्तर प्रदेश भाषा अधिनियम, 1950, उत्तर प्रदेश राजभाषा अधिनियम, 1951 प्रमुख हैं।

उत्तर प्रदेश की प्रथम विधान सभा से सोलहवीं विधान सभा के मध्य पारित महत्वपूर्ण अधिनियमों का संक्षिप्त विवरण इस पुस्तक में दिया गया है। किसी भी अधिनियम के लिये मूल अधिनियम का अध्ययन किया जाना उपयोगी होगा। इस पुस्तक के सम्पादन में विधान

पुस्तकालय के पुस्तकालयाध्यक्ष एवं मुख्य प्रलेखीकरण अधिकारी श्री दिलीप कुमार दुबे तथा शोध एवं सन्दर्भ अधिकारी श्रीमती कल्पना पन्त ने अपना योगदान दिया है।

आशा है संसदीय प्रणाली और व्यवहार में रूचि रखने वाले पाठकों एवं शोधकर्ताओं के लिये यह पुस्तक एक उपयोगी संदर्भ ग्रन्थ सिद्ध होगी।

¼ inhi dekj nc ½
प्रमुख सचिव
उत्तर प्रदेश विधान सभा।

लखनऊ
23 फरवरी, 2017

fo"k; & lwph

Ø- l-	fo"k;	i"B l-
1	विधायन का प्रादुर्भाव एवं विकास	1—3
2.	विधान निर्माण	4—9
3.	उत्तर प्रदेश विधान मण्डल में विधान निर्माण	10—26
4.	उत्तर प्रदेश विधान मण्डल में गैर—सरकारी सदस्यों के असरकारी विधेयक	27—39
5.	उत्तर प्रदेश विधान मण्डल की स्थापना और विकास : अधिनियमों के आइने में	40—52
6.	उत्तर प्रदेश विधान सभा की प्रक्रिया तथा कार्य—संचालन नियमावली, 1958 में विधान निर्माण संबंधी नियम	53—84
7.	उत्तर प्रदेश विधान सभा के महत्वपूर्ण विधायन	85—133
8.	संदर्भ ग्रन्थों की सूची	134

fo/kk;u dk iknHkkko
,o fodkl

भारत के संविधान में देश की शासन–व्यवस्था के लिये संसदीय शासन प्रणाली को अंगीकृत किया गया है। इस प्रणाली को स्वीकार करने के पीछे हमारे संविधान निर्माताओं की ऐसी मान्यता थी कि यहाँ की संस्कृति और लोक–प्रशासन की दृष्टि से यही प्रणाली सबसे उपयुक्त होगी। उनका यह भी मानना था कि इसके अन्तर्गत गठित लोकप्रिय सरकारें आम–जनता के कल्याण के लिये जनोपयोगी नीतियां और कार्यक्रम बनायेंगी और उपयुक्त शासन–व्यवस्था का प्रबन्ध करने के साथ–साथ ऐसे कानूनों का निर्माण करेंगी जो नागरिकों की आशाओं और आकांक्षाओं के अनुरूप होंगे।

समाज में कानून–व्यवस्था बनाये रखने की जिम्मेदारी शासन की होती है। साथ ही देश तथा प्रदेश के शासन को सुचारू रूप से संचालित करने के लिये नियम तथा अनुशासन भी आवश्यक होते हैं। प्रजातांत्रिक संसदीय प्रणाली में कानून निर्माण का कार्य विधायिका का है। हमारे देश में संसद (लोक सभा तथा राज्य सभा) तथा राज्य विधान मण्डलों द्वारा विधेयकों के माध्यम से कानून बनाये जाते हैं।

संसदीय प्रजातंत्र में जनता द्वारा निर्वाचित सरकारों का प्रमुख कार्य है नागरिकों की आवश्यकताओं और सुविधाओं का उचित प्रबंध करना और उनके सामाजिक और आर्थिक उत्थान के लिये विकासपरक योजनाओं को क्रियान्वित करना। साथ ही, लोकप्रिय सरकारों का दायित्व यह सुनिश्चित करना भी होता है कि राज्य में कानून–व्यवस्था बनी रहे और प्रचलित कानूनों के अन्तर्गत नागरिकों को न्याय सुलभ हो सके। प्रजातांत्रिक संसदीय प्रणाली में शासन के तीनों अंगों–विधायिका, कार्यपालिका तथा न्यायपालिका द्वारा इस उत्तरदायित्व का वहन किया

जाता है। विधायिका कानून बनाती है, कार्यपालिका उन्हें लागू करवाती है तथा न्यायपालिका द्वारा कानून का पालन न करने वालों को दण्डित किया जाता है।

अधिनियम (कानून) बनाना शासन का काम है और शासन जिस रूप में हमें विधान मण्डल में दिखायी देता है, वह है मंत्रिपरिषद्। समाज में कानून व्यवस्था बनाये रखने की जिम्मेदारी शासन की होती है। इसलिये जब कोई नया अधिनियम बनाने की आवश्यकता होती है अथवा पहले से निर्मित किसी अधिनियम में अग्रेतर संशोधन की अपेक्षा होती है, तो संसदीय प्रक्रिया के अन्तर्गत उसका प्रस्ताव विधेयक के रूप में सदन में कोई मंत्री पेश करता है। विधान मण्डल के दोनों सदनों से पारित होने के बाद उस पर राष्ट्रपति अथवा राज्यपाल की अनुमति मिलते ही वह राज्य का अधिनियम बन जाता है।

विधायन का प्रादुर्भाव सर्वप्रथम इंग्लैण्ड में हुआ था। इंग्लैण्ड के संसद सदस्य स्थानीय समस्याओं और कठिनाइयों पर ध्यान आकृष्ट कराने के लिये राजा को याचिकायें प्रस्तुत करते थे। कभी–कभी इन याचिकाओं पर संसद में चर्चा होती थी और कभी राजा द्वारा इन्हें स्वीकार भी कर लिया जाता था। किन्तु इन याचिकाओं पर राजा द्वारा दिये गये निर्णयों से अथवा की गयी कार्यवाही से संसद सदस्य प्रायः संतुष्ट नहीं होते थे। अतः सदस्यों ने याचिकाओं को विधेयक के रूप में प्रस्तुत करने का निर्णय लिया तथा राजा से आग्रह किया गया कि इन विधेयकों पर ठीक उसी रूप में निर्णय लिया जाये, जिस रूप में उन्हें प्रस्तुत किया गया है।

विधेयकों के प्रस्तुतिकरण के सम्बन्ध में अपनायी गयी यही व्यवस्था क्रमशः विकसित होकर, विधान निर्माण की प्रक्रिया के स्वरूप में अंगीकृत हो गयी।

Hkkjr esa fo/kk;h 0;oLFkk dk fodkl

'रेग्युलेटिंग एक्ट, 1773 (Regulating Act, 1773) के उपबंधों के अधीन अपनायी गयी विधायी प्रक्रिया, में गवर्नर जनरल की कौंसिल की विधि निर्माण की शक्ति ऐसे नियम, अध्यादेश तथा विनियम बनाने और जारी करने तक ही सीमित थी, जिन्हें न्यायोचित और उपयुक्त माना जाता था और जो इंग्लैण्ड की विधियों के प्रतिकूल नहीं होते थे। इसके उपरान्त सन् 1833, 1858 तथा 1861 में पारित इंडियन कौंसिल्स ऐक्ट्स के द्वारा, विधायी संस्थाओं में विधेयकों के पुरःस्थापन एवं पारण के संबंध में अपनायी जाने वाली प्रक्रियाओं में आवश्यकतानुसार संशोधन किये जाते रहे। प्रान्तों के संबंध में अपनायी गयी व्यवस्था के अनुसार लेजिस्लेटिव कौंसिल ऐसे विधायी प्रस्तावों पर विचार कर सकती थी जिन्हें सरकार द्वारा उसके समक्ष प्रस्तुत किया जाता था। समस्त अधिनियमों पर गवर्नर के अतिरिक्त, गवर्नर–जनरल की स्वीकृति भी अनिवार्य होती थी। इसी क्रम में इंडियन कौंसिल्स ऐक्ट्स 1892 तथा 1909 तथा गवर्नमेंट आफ इण्डिया ऐक्ट, 1915 के द्वारा सार्वजनिक हित के विषयों पर विधियों के निर्माण की प्रक्रिया में भारतीय सदस्यों को भी सम्मिलित होने का अधिकार दिया गया।

xouesaV vkQ bf.M;k ,DV] 1935 के द्वारा उत्तर प्रदेश विधान मण्डल के विकास के संबंध में एक महत्वपूर्ण व्यवस्था की गयी, जिसके अन्तर्गत विधान मण्डल द्विसदनीय हो गया, अर्थात् विधान परिषद् और विधान सभा। उत्तर प्रदेश विधान सभा का गठन 1937 में हुआ।

fo/kku fuek.k

हमारे संविधान में केन्द्र राज्यों के बीच विधायी शक्तियों का वितरण करने के लिये तीन सूचियां बनायी गयी हैं– संघ सूची, राज्य सूची तथा समवर्ती सूची।

l?k lwph %& में उन विषयों का उल्लेख है जिनके संबंध में केवल संसद ही कानून बना सकती है।

jkT; lwph %& में उल्लिखित विषयों में किसी भी राज्य विधान मण्डल को कानून बनाने का अधिकार है।

leorhZ lwph %& में उल्लिखित विषयों के संबंध में संसद तथा राज्य विधान मण्डल, दोनों को ही कानून बनाने की शक्ति प्रदान की गयी है।

जब किसी नये विषय पर कानून बनाया जाता है अथवा पहले से निर्मित कानून में संशोधन की आवश्यकता होती है, तो उसका प्रस्ताव सदन में विधेयक के रूप में किसी मंत्री द्वारा प्रस्तुत किया जाता है। विधेयक के दोनों सदनों द्वारा पारित होने के पश्चात् उस पर यथास्थिति, श्री राष्ट्रपति अथवा राज्यपाल की स्वीकृति प्राप्त होने के पश्चात् वह अधिनियम बन जाता है।

fo/kku fuek.k dh çfØ;k

जब कभी सरकार को सार्वजनिक हित में किसी नये कानून को बनाने अथवा पहले से प्रचलित किसी कानून में संशोधन करने की आवश्यकता महसूस होती है, तो सदन में उसका प्रस्ताव विधेयक के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। विधेयकों को भी दो भागों में विभक्त किया गया है– सरकारी विधेयक तथा असरकारी विधेयक। जब कोई मंत्री विधेयक प्रस्तुत करता है तो वह **ljdkjh fo/k;d** होता है। यदि सत्ता पक्ष का कोई सदस्य, जो मंत्री नहीं है, अथवा विपक्ष का कोई

सदस्य विधेयक प्रस्तुत करता है, तो वह **vljdkjh fo/k;d** होता है।

fo/k;d d çdkj

सरकार द्वारा प्रस्तावित कानून का प्रारूप किसी मंत्री या सदस्य द्वारा विधेयक के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। विधेयक प्रस्तुत करने वाले मंत्री अथवा सदस्य को भारसाधक मंत्री या भारसाधक सदस्य कहते हैं। किसी भी विधेयक में– नाम, प्रस्तावना, विस्तार सम्बंधी खण्ड, परिभाषा सम्बंधी खण्ड, नियम बनाने सम्बंधी खण्ड, निरसन, अनुसूचियां, प्रत्यायोजित विधि सम्बंधी प्रावधान तथा उद्देश्य और कारण इत्यादि बिन्दु समाहित होते हैं।

fo/k;dk dh fo"k;&oLr| के आधार पर उन्हें निम्नलिखित श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है–

1- ey fo/k;d& मूल विधेयक में किसी नये विषय पर प्रस्ताव, नीतियां आदि होती हैं।

2- l'kk/ku fo/k;d& संशोधन विधेयकों द्वारा पहले से चले आ रहे अधिनियमों में संशोधन के प्रस्ताव लाए जाते हैं।

3- ledu fo/k;d& इन विधेयकों का उद्देश्य किसी विषय पर पहले से विद्यमान विधियों को समेकित करना होता है।

4- lekIr gku okyh fof/k;k dk tkjh j[ku lEc/kh foèk;d& ऐसे विधेयकों का उद्देश्य व्यपगत होने अथवा समाप्त होने वाली विधियों अथवा अधिनियमों को जारी रखना होता है।

5- v/;kn'kk dk LFkku yu oky fo/k;d

जब सदन का सत्र नहीं चल रहा होता है और सरकार को यह प्रतीत होता है कि किसी विषय विशेष पर अविलम्ब विधिक व्यवस्था करना अनिवार्य है, तो केन्द्र में राष्ट्रपति द्वारा तथा राज्यों में राज्यपाल द्वारा अध्यादेशों के माध्यम से विधिक व्यवस्था की जाती है, जिसे अध्यादेशों का प्रख्यापन कहते हैं। सत्र आरम्भ होने पर अध्यादेशों के

प्रतिस्थानी विधेयक सदन में पुरःस्थापित किये जाते हैं।

6- foÙkh; fo/k;d

7- /ku fo/k;d

8- fofu;kx fo/k;d

9- lfo/kku l'kks/ku fo/k;d

fo/k;d dh e[; ckrs

1- uke – प्रत्येक विधेयक का नाम होता है जिसमें यह बताया जाता है कि उस विधेयक का स्वरूप क्या है।

2- mnns'kdk – यह वह खण्ड होता है जो विधेयक के नाम के बाद और अधिनियम खंड में पहले होता है तथा इसका आशय कुछ ऐसे तथ्यों पर प्रकाश डालना है जिन्हें अधिनियम में दिये गये उपबन्धों को समझने से पहले स्पष्ट करना आवश्यक है।

3- vf/kfu;e l= – प्रत्येक विधेयक में विधेयक के खण्डों से पहले एक संक्षिप्त पैरा होता है, जो इस प्रकार

होता है :–

''भारत गणराज्य के .....
.....वर्ष
में यह अधिनियम हो।''

4- lf{kIr uke – प्रत्येक विधेयक का एक संक्षिप्त नाम होता है। यह विधेयक का लेबल या अनुक्रमणिका शीर्षक मात्र होता है तथा इसी नाम से उसे खोजा जाता है।

5- foLrkj lEcU/kh [k.M – इसमें यह बताया जाता है कि अधिनियम का विस्तार कहाँ–कहाँ हो।

6- fuoZpu ;k ifjHkk"kk lEcU/kh [k.M – इसमें अधिनियम में प्रयुक्त शब्दावलियों की परिभाषा दी जाती है।

7- vof/k lEc/kh [k.M – कुछ विधियां सीमित अवधि के लिये होती हैं और उन्हें एक संक्षिप्त निश्चित अवधि के लिये अधिनियमित किया जाता है।

8- ?kks"k.kk lEc/kh [k.M – घोषणा संबंधी खण्ड जो विधेयक के प्रोद्धरण खंड (खंड 1) के बाद आता

है, संविधि का वह भाग होता है '' जो उस आवश्यकता या अपेक्षा की घोषणा करता है, जिसे पूरा करने के लिये वह विधि बनायी गयी हो।''

9- fu;e cukus lEcU/kh [k.M – इसमें कार्यपालिका को विभिन्न विधियों को लागू करने के लिए नियम तथा विनियम बनाने की शक्ति प्रत्यायोजित की जाती है।

10- fujlu rFkk 0;koÙk – यह खण्ड विधेयक के अन्त में रखा जाता है ताकि जब कभी इस खण्ड का निरसन किया जाय तो अधिनियम का ढांचा पहले जैसा ही बना रहे।

11- vuqlfp;k – नियम के अनुसार ब्यौरे की बातें अनुसूचियों में दी जाती हैं।

12- mnns'; rFkk dkj.kksa dk dFku – इसमें विधेयक को जारी करने की आवश्यकता, प्रयोजन एवं विस्तार पर प्रकाश डाला जाता है।

13- [k.Mksa ij fVIif.k;k – कुछ विधेयकों में खण्डों

पर टिप्पणियां भी दी जाती हैं जिनमें विधेयक के विभिन्न उपबंधों और उनके महत्व पर प्रकाश डाला जाता है।

14- çR;k;kftr fo/kku lEcU/kh Kkiu – इसमें अधीनस्थ विधायी शक्ति के प्रत्यायोजित करने के प्रस्ताव होते हैं।

mÙkj çn'k fo/kku e.My e fo/kku fuek.k

उत्तर प्रदेश का विधान मण्डल द्विसदनीय है– विधान सभा (निम्न सदन) तथा विधान परिषद् (उच्च सदन)। प्रचलित संसदीय परम्परा के अनुसार, सम्बंधित भारसाधक मंत्री अथवा भारसाधक सदस्य के द्वारा विधेयक का प्रारूप सदन में प्रस्तुत किया जाता है। वित्तीय विधेयक को छोड़कर, अन्य कोई भी विधेयक विधान सभा अथवा विधान परिषद् किसी भी सदन में प्रस्तुत किया जा सकता है। विधेयक के प्रस्तुत होने से उसके पारित होने तक वह तीन चरणों से गुजरता है, जिन्हें संसदीय भाषा में क्रमशः प्रथम वाचन (First Reading), द्वितीय वाचन (Second Reading) तथा तृतीय वाचन (Third Reading) कहा जाता है।

çFke okpu

भारसाधक मंत्री अथवा सदस्य द्वारा विधेयक को सदन में प्रस्तुत करने से पूर्व सदन की अनुज्ञा लेनी होती है, जिसे इस प्रकार से कहा जाता है.....।'' सदन की अनुज्ञा प्राप्त होने पर उसके द्वारा विधेयक को पुरःस्थापित किया जाता है। यह प्रक्रिया विधेयक का प्रथम वाचन होती है।

f}rh; okpu

विधेयक के द्वितीय वाचन के स्तर पर, विधेयक पर चर्चा होती है तथा यदि विधेयक के किसी खण्ड में कोई माननीय सदस्य संशोधन का प्रस्ताव रखते हैं, तो उन संशोधनों पर चर्चा होती है और सदन की अनुमति प्राप्त होने पर उन संशोधनों को विधेयक के सम्बंधित खण्डों में जोड़ दिया जाता है अथवा यदि संशोधन के प्रस्ताव पर सदन की अनुमति नहीं प्राप्त होती, तो या तो माननीय सदस्य द्वारा संशोधन का प्रस्ताव वापस ले लिया जाता है या फिर

सम्बंधित खण्ड अपने मूल रूप में विधेयक का अंग बन जाता है। इसी प्रकार विधेयक के सभी खण्डों पर चर्चा होती है, जिसे खण्डशः विचार किया जाना कहा जाता है। यह चरण विधेयक का द्वितीय वाचन होता है।

r`rh; okpu

विधेयक के सभी खण्डों तथा उसके शीर्षक और प्रस्तावना के विधेयक का अंग बन जाने के पश्चात्, सम्बंधित भारसाधक मंत्री अथवा सदस्य द्वारा उसे पारित किये जाने का प्रस्ताव किया जाता है ....।'' तत्पश्चात्, सदन की अनुमति प्राप्त होने पर विधेयक पारित हो जाता है। इसे विधेयक का तृतीय वाचन कहा जाता है।

çoj lfefr@l;qDr çoj lfefr dk fufn"V fd;k tkuk&

विधेयक के द्वितीय वाचन अर्थात् उस पर विचार किये जाने का प्रस्ताव उपस्थित करते समय कोई माननीय सदस्य संशोधन के रूप में यह प्रस्ताव कर सकते हैं कि विधेयक को सदन की प्रवर समिति अथवा विधान परिषद की सहमति से दोनों सदनों की संयुक्त प्रवर समिति को सौंप दिया जाये। प्रवर समिति/संयुक्त प्रवर समिति के सदस्यों के नाम सम्बंधित सदन/सदनों के अध्यक्ष/सभापति द्वारा तय किये जाते हैं। प्रवर समिति में विधेयक पर खण्डशः विचार किया जाता है तथा निर्दिष्ट समय–सीमा में संस्तुतियों सहित सदन में प्रस्तुत किया जाता है।

प्रवर समितियों के प्रतिवेदन सदन में प्रस्तुत हो जाने के उपरान्त सामान्यतया विधेयक के खण्डों पर विस्तार से चर्चा नहीं की जाती। प्रतिवेदन में की गयी संस्तुतियों के अनुरूप ही विधेयक को सदन द्वारा खण्डशः स्वीकार करते हुए पारित कर दिया जाता है।

यदि कोई विधेयक विधान सभा में प्रस्तुत किया जाता है, तो उसके पारित हो जाने के पश्चात् उसे विधान परिषद् के विचारार्थ भेजा जाता है। यदि विधान परिषद् उसे मूल रूप से पारित कर देती है, तो

वह विधेयक दोनो सदनों अर्थात् विधान मण्डल द्वारा पारित हुआ माना जाता है।

किन्तु यदि विधान परिषद् के विचारार्थ भेजे गये विधेयक पर विधान परिषद् द्वारा विचार नहीं किया जाता है और तीन मास से अधिक का समय बीत जाता है, तो विधान सभा में इसकी सूचना दी जाती है और विधेयक पुनः पारित करके विधान परिषद् भेजा जाता है। यदि पुनः एक मास से अधिक का समय व्यतीत हो जाता है और विधान परिषद् द्वारा उसे पारित नहीं किया जाता है, तो जिस रूप में उस विधेयक को विधान सभा ने दूसरी बार पारित किया था, उसी रूप में वह विधेयक विधान मण्डल द्वारा पारित समझा जाता है।

/ku fo/k;d

धन विधेयक की परिभाषा इस प्रकार की गई है :–

''(1) कोई विधेयक धन विधेयक समझा जाएगा यदि उसमें केवल निम्नलिखित सभी या किन्हीं विषयों से सम्बंधित उपबंध है, अर्थात्–

(क) किसी कर का अधिरोपण, उत्सादन, परिहार, परिवर्तन या विनियमन;

(ख) भारत सरकार द्वारा धन उधार लेने का कोई प्रत्याभूति देने का विनियमन अथवा भारत सरकार द्वारा अपने ऊपर ली गई या ली जाने वाली किन्हीं वित्तीय बाध्यताओं से सम्बन्धित विधि का संशोधन;

(ग) भारत की संचित निधि यथा आकस्मिकता निधि की अभिरक्षा, ऐसी किसी निधि में धन जमा करना या उसमें से धन निकालना;

(घ) भारत की संचित निधि में से धन का विनियोग;

(ड़) किसी व्यय को भारत की संचित निधि पर भारित व्यय घोषित करना या ऐसे किसी व्यय की रकम को बढ़ाना;

(च) भारत की संचित निधि या भारत के लोक लेखे मद्धे धन प्राप्त करना अथवा ऐसे धन की अभिरक्षा या उसका निर्गमन अथवा संघ या राज्य के लेखाओं की संपरीक्षा; या

(छ) उपखंड (क) से उपखंड (च) में विनिर्दिष्ट किसी विषय का आनुषांगिक कोई विषय।

(2) कोई विधेयक केवल इस कारण धन विधेयक नहीं समझा जाएगा कि वह जुर्मानों या अन्य धनीय शास्तियों के अधिरोपण का अथवा अनुज्ञप्तियों के लिए फीसों की या की गई सेवाओं के लिए फीसों की मांग का या उनके संदाय का उपबंध करता है अथवा इस कारण धन विधेयक नहीं समझा जाएगा कि वह किसी स्थानीय प्राधिकारी या निकाय द्वारा स्थानीय प्रयोजनों के लिए किसी कर के अधिरोपण, उत्सादन, परिहर, परिवर्तन या विनियमन का उपबंध करता है''।

foÙk fo/k;d

संविधान में धन विधेयकों तथा वित्त विधेयकों के बीच विभेद किया गया है। वित्त विधेयकों को दो श्रेणियों में बांटा जा सकता है; पहली श्रेणी में वे विधेयक हैं जिनमें उन विशेष विषयों में से किसी के भी संबंध में उपबंध किया गया हो, जिनके कारण कोई विधेयक धन विधेयक बन जाता है, परंतु इनमें केवल वही विषय नहीं है। दूसरी श्रेणी में ऐसे विधेयक आते हैं जो, यदि अधिनियमित हो जायें और लागू हो जायें तो उन पर भारत की संचित निधि में से खर्च करना पड़ेगा। संदर्भ की सुविधा के लिए पहले को वित्त विधेयक श्रेणी 'क' और दूसरे को वित्त विधेयक श्रेणी 'ख' में रखा जा सकता है।

J\.kh ^d* d\ foÙk fo/k;d

श्रेणी 'क' के अंतर्गत आने वाला वित्त विधेयक केवल लोक सभा में ही पुरःस्थापित किया जा सकता है और उसे पुरःस्थापित करने के

लिए राष्ट्रपति की सिफारिश जरूरी हैं। यदि ऐसा विधेयक इस सिफारिश के बिना पुरःस्थापित कर दिया जाये तो उसे वापस लेना पड़ता है परंतु राष्ट्रपति को आवश्यक सिफारिश मिल जाने पर इसे पुनः पुरःस्थापित किया जा सकता है। सामान्यतः ऐसा विधेयक दोनों सदनों की संयुक्त समिति को नहीं सौंपा जा सकता। लेकिन लोक सभा विशेष मामलों में सम्बद्ध नियम के निलम्बन का प्रस्ताव स्वीकार करके ऐसे विधेयकों को संयुक्त समिति को सौंप सकती है। एक अवसर पर श्रेणी 'क' का विधेयक नियम 74 के परंतुक के निलम्बित किए बिना संयुक्त समिति को सौंपा गया है।

J.kh ^[k* d foÙk fo/k;d

जब किसी विधेयक में अन्य बातों के साथ–साथ भारत की संचित निधि से खर्च के एक या कई प्रस्ताव हों, उदाहरण के लिए यह उपबंध किया गया हो कि अधिकारियों या अन्य प्राधिकारियों की नियुक्ति की जाए या किसी संस्था की स्थापना की जाये तो यह श्रेणी 'ख' का वित्त विधेयक बन जाता है।

विधान मण्डल के दोनों सदनों द्वारा विधेयक के पारित हो जाने के पश्चात् उसे राज्यपाल महोदय की अनुमति के लिये भेजा जाता है। श्री राज्यपाल उस विधेयक पर या तो अपनी अनुमति दे देते हैं, या उसे अपने समाधान हेतु रोक लेते हैं या राष्ट्रपति महोदय के विचारार्थ रक्षित कर लेते हैं। श्री राज्यपाल, यदि उचित समझें तो, अपने समक्ष प्रस्तुत विधेयक को (धन विधेयक को छोड़कर) अपने संदेश के साथ, पुनर्विचार हेतु राज्य विधान मण्डल को वापस कर सकते हैं। यदि विधान मण्डल उस पर पुनः विचार करने के बाद उसे श्री राज्यपाल के संदेश में सुझाये गये संशोधन सहित अथवा बिना संशोधनों के पारित कर देता है, तो श्री राज्यपाल को उस पर अनुमति देना आवश्यक होता है।

राज्यपाल महोदय की अनुमति प्राप्त हो जाने पर वह विधेयक,

अधिनियम बन जाता है। इस प्रकार विधान निर्माण की प्रक्रिया पूरी हो जाती है।

विधान मण्डल द्वारा पारित विधेयकों के अधिनियम बनने संबंधी घोषणा सदन में प्रमुख सचिव, विधान सभा द्वारा की जाती है।

अधिनियमों को गजट में प्रकाशित किया जाता है। तदुपरान्त, उनकी प्रविष्टि राज्य की Statute Book (कानून की किताब) में की जाती है। इससे यह पता चलता है कि किसी वर्ष विशेष में राज्य में कितने और कौन–कौन से कानून लागू हुए हैं।

vl jdkjh fo/k;d

संसदीय प्रक्रिया के अंतर्गत जब किसी कानून का प्रस्ताव विधेयक के रुप में किसी मंत्री द्वारा सदन में प्रस्तुत किया जाता है, तो सरकारी विधेयक होता है। किन्तु जैसा कि सर्वमान्य तथ्य है कि बौद्धिक परिपक्वता पर किसी व्यक्ति विशेष का एकाधिकार नहीं होता है। अतः ऐसे अवसर भी आते हैं, जब किसी नये विषय पर कानून बनाने की आवश्यकता पर अथवा पहले से प्रचलित किसी कानून में संशोधन करने की आवश्यकता पर शासन से पहले किसी गैर सरकारी सदस्य का ध्यान आकर्षित हो जाये और उनके द्वारा सदन में विधेयक का प्रारुप प्रस्तुत कर दिया जाये, जिसे असरकारी अथवा गैर सरकारी विधेयक कहा जाता है।

यद्यपि उत्तर प्रदेश विधान सभा में पुरःस्थापित होने वाले असरकारी विधेयकों की संख्या अत्यन्त न्यून रही है। किन्तु यह भी महत्वपूर्ण है कि उत्तर प्रदेश विधान सभा में असरकारी विधेयक प्रस्तुत करने वालों में महत्वपूर्ण सदस्य रहे हैं जिनमें भारत के प्रधानमंत्रियों में श्री लाल बहादुर शास्त्री और चौधरी चरण सिंह उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्रियों में श्री चन्द्रभानु गुप्त, चौधरी चरण सिंह और श्री नारायण दत्त तिवारी मंत्रियों में श्री जयराम वर्मा, श्री शतरुद्र प्रकाश, श्री राम स्वरुप वर्मा, श्री हुकुम सिंह, श्री ज्वाला प्रसाद श्रीवास्तव, श्री रुपनाथ सिंह यादव और श्री

उदित नारायण शर्मा तथा उप मंत्रियों में श्री बाबू लाल वर्मा और श्री सुलतान आलम खां के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

असरकारी विधेयकों के प्रस्तुत होने की संख्या अत्यन्त न्यून होने के कई कारण होते हैं। असरकारी सदस्यों को अपने विधेयक के पारित होने की आशा अत्यन्त क्षीण रहती है। उनका मुख्य उद्देश्य होता है– विधेयक के उद्देश्य और कारणों की ओर शासन का ध्यान आकृष्ट करना। दूसरा कारण है विधेयकों का प्रारूप तैयार करना। विधेयकों का प्रारूपण स्वयं में एक कला है। सरकारी विधेयकों का प्रारूप तैयार करने के लिए जहां विधि विशेषज्ञों की पूरी टीम उपलब्ध रहती है, वहीं असरकारी विधेयकों का प्रारूप तैयार करने के लिये कोई विशिष्ट सुविधा उपलब्ध नहीं होती।

आम–जनता की समस्याओं को सदन के सामने रखने में गैर–सरकारी सदस्यों के असरकारी विधेयक अत्यन्त प्रभावी भूमिका निभाते हैं। इनके माध्यम से लोगों की मांगें और उनकी आकांक्षाएं सदन के सामने रखी जा सकती हैं और उनकी शिकायतों का समाधान कराया जा सकता है।

गैर–सरकारी सदस्यों के विधेयकों का एक महत्वपूर्ण पहलू यह भी है कि सदन का एक मा० सदस्य न केवल असरकारी विधेयक को सदन में पुरःस्थापित करके उस पर चर्चा की शुरुआत करता है बल्कि वह उस पर हुई बहस का उत्तर देता है और उस पर हुई किसी आलोचना का समाधान करने का प्रयास भी करता है और यह अनुरोध करता है कि सरकार जनहित में इस विधेयक को पारित करने में अपना सहयोग और समर्थन दे। इसी प्रकार से, जब किसी असरकारी विधेयक में अंतर्निहित सिद्धान्तों के दृष्टिकोण से सरकार सदन में सहमति व्यक्त करती है और सदन को यह आश्वस्त करती है कि वह स्वयं इस पर विधेयक प्रस्तुत करने के लिए इच्छुक है तो इस तरह से उस विधेयक की निष्पत्ति एक फलदायक परिणाम के रूप में होती है और जिससे

अन्ततः लोकतंत्र मजबूत होता है। इसी तरह से, भारत में लोक सदनों में गैर–सरकारी सदस्यों को असरकारी विधेयकों को पुरःस्थापित करने का अधिकार सर्वप्रथम जो गवर्नमेण्ट ऑफ इण्डिया एक्ट, 1919 के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा प्रदान किया गया था, वह वर्तमान में संसद तथा राज्य विधान मण्डलों के प्रक्रिया–नियमों में महत्वपूर्ण संसदीय उपबंध के रूप में प्राविधानित और विस्तारित है।

असरकारी विधेयकों की प्रस्थापनाएं सरकार को राज्य के प्रशासन को और अधिक चुस्त–दुरुस्त बनाने में सहायक सिद्ध होती रही हैं जिससे असरकारी विधेयकों की उपयोगिता एवं उपादेयता प्रमाणित होती है।

धन विधेयक और वित्त विधेयक के सम्बन्ध में क्रमशः संसद तथा राज्य के विधान मण्डलों के लिए ''भारत का संविधान'' अनुच्छेद 110 तथा अनुच्छेद 199 में निम्नलिखित व्यवस्था उपबन्धित की गयी हैः–

(1) कोई विधेयक धन विधेयक समझा जाएगा यदि उसमें केवल निम्नलिखित सभी या किन्हीं विषयों से सम्बन्धित उपबन्ध है, अर्थातः–

(क) किसी कर का अधिरोपण, उत्सादन, परिहर, परिवर्तन या विनियमन;

(ख) भारत सरकार द्वारा धन उधार लेने का या कोई प्रत्याभूति देने का विनियमन अथवा भारत सरकार द्वारा अपने ऊपर ली गई या ली जाने वाली किन्हीं वित्तीय बाध्यताओं से सम्बन्धित विधि का संशोधन;

(ग) भारत की संचित निधि यथा आकस्मिकता निधि की अभिरक्षा, ऐसी किसी निधि में धन जमा कराना या उसमें से धन निकालना;

(घ) भारत की संचित निधि से धन का विनियोग;

(ड़) किसी व्यय को भारत की संचित निधि पर भारित व्यय घोषित करना या ऐसे किसी व्यय की रकम को बढ़ाना;

(च) भारत की संचित निधि या भारत के लोक लेखे मद्धे धन प्राप्त करना अथवा ऐसे धन की अभिरक्षा या उसका निर्गमन अथवा संघ या राज्य के लेखकों की संपरीक्षा; या

(छ) उपखण्ड (क) से उपखण्ड (च) में विनिर्दिष्ट किसी विषय का आनुषंगिक कोई विषय।

(2) कोई विधेयक केवल इस कारण धन विधेयक नहीं समझा जाएगा कि वह जुर्मानों या अन्य धनीय शास्तियों के अधिरोपण का अथवा अनुज्ञप्तियों के लिए फीसों की या की गयी सेवाओं के लिए फीसों की मांग का या उनके संदाय का उपबन्ध करता है अथवा इस कारण धन विधेयक नहीं समझा जाएगा कि वह किसी स्थानीय प्राधिकारी या निकाय द्वारा स्थानीय प्रयोजनों के लिए किसी कर के अधिरोपण, उत्सादन, परिहार परिवर्तन या विनियमन का उपबन्ध करता है।

यदि यह प्रश्न उठे कि क्या कोई विधेयक धन विधेयक है अथवा नहीं तो उस सम्बन्ध में अध्यक्ष का निर्णय अन्तिम होता है। जब अध्यक्ष किसी विधेयक के बारे में यह निर्णय ले लेता है कि वह धन विधेयक है तो वह उस पर अपने हस्ताक्षर सहित एक प्रमाण पृष्ठांकित कर देता है कि अमुक विधेयक धन विधेयक है। इसके बाद ही उसे द्वि–सदन वाले विधान मण्डल में भेजा जाता है या राज्यपाल को अनुमति के लिए प्रेषित किया जाता है। यहाँ पर यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि भारत का संविधान के अनुच्छेद, 199 के खण्ड (3) में यह व्यवस्था उपबन्धित की गयी है कि यदि विधान मण्डल के विधान परिषद में पुनःस्थापित कोई विधेयक धन विधेयक है या नहीं तो उस पर उस राज्य के विधान सभा के अध्यक्ष का विनिश्चय अन्तिम होगा।

उक्त से यह स्पष्ट है कि जिस राज्य में विधान परिषद है और कोई विधेयक पुनःस्थापित किया जा चुका है तब यदि यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि प्रस्तुत विधेयक धन विधेयक है अथवा नहीं, तो इस पर

विनिश्चय अध्यक्ष द्वारा किया जायेगा। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि विधान सभा के अध्यक्ष को किसी विधेयक पर धन विधेयक होने या न होने का विनिश्चिय देने का अधिकार तभी उत्पन्न होगा जब राज्य में विधान परिषद् हो और ऐसे विधेयक को विधान मण्डल में पुनःस्थापित किया जा चुका हो, जिन राज्यों में केवल विधान सभा ही स्थापित है, वहाँ सभा अध्यक्ष ही ऐसे विधेयकों पर विनिश्चय करेंगे।

जो विधेयक धन विधेयक होता है, उसमें अध्यक्ष को इस आशय का एक प्रमाण पृष्ठांकित करना होता है कि अमुक विधेयक धन विधेयक है। इस प्रमाण पृष्ठांकन के उपरान्त ही विधेयक को राज्यपाल की अनुमति हेतु प्रस्तुत किया जाना होता है।

संविधान के अनुच्छेद 198 में धन विधेयकों के सम्बन्ध में विशेष प्रक्रिया उपबन्धित की गयी है। द्वि–सदन वाले राज्य में धन विधेयक केवल विधान सभा में ही पुनःस्थापित किये जा सकते हैं। द्वि–सदन वाले राज्य में विधान सभा द्वारा धन विधेयक पारित किये जाने के उपरान्त परिषद् को पारण हेतु भेजा जाता है और इसके लिए विधान परिषद् को 14 दिन का समय दिया जाता है। यदि 14 दिन के भीतर विधान परिषद् उस विधेयक को विधान सभा को नहीं लौटाता है तो उस अवधि की समाप्ति पर वह विधेयक उसी रुप में दोनों सदनों द्वारा पारित हुआ समझ लिया जाता है, जिस रुप में इसे विधान सभा में पारित किया गया हो। ऐसी अवधि की गणना विधान परिषद् सचिवालय में उस विधेयक के प्राप्त होने की तारीख से की जाती है।

किसी धन विधेयक को पुरःस्थापित किये जाने से पूर्व राज्यपाल की सिफारिश करना आवश्यक होता है, परन्तु जहाँ कोई विधेयक अनुच्छेद 199 के खण्ड (1) के उपबन्ध (क से च) में निर्दिष्ट मामलों से किसी मामलों के आनुषंगिक विषयों के सम्बन्ध में हो तो उस विधेयक के पुरःस्थापित किये जाने के लिए राज्यपाल की सिफारिश की आवश्यकता नहीं होती है। ऐसे विधेयक पर अनुच्छेद 207 के

खण्ड (3) के अधीन विचार करने के लिए राज्यपाल की सिफारिशों की आवश्यकता होती है।

संविधान के अनुच्छेद 207 में विधान मण्डल के समक्ष पुरःस्थापित होने वाले केवल कराधान प्रस्ताव को छोड़कर अन्य मामलों के विधेयक प्रस्तुत किये जा सकते हैं। इन विधेयकों को अनुच्छेद 199 के अन्तर्गत धन विधेयक नहीं कहा जा सकता है। अतः अनुच्छेद 207 के अन्तर्गत संयुक्त या मिश्रित विधेयक प्रस्तुत करने पर कोई प्रतिबन्ध नहीं है तथापि संयुक्त या मिश्रित प्रकार के विधेयक, जहाँ तक सम्भव हो, की संख्या न्यून होनी चाहिए और उन्हीं मामलों में ऐसे विधेयक प्रस्तुत किये जाने चाहिए, जहाँ कराधान प्रस्ताव तथा इनसे सम्बन्धित अन्य मामलों को पृथक करना सम्भव नहीं हो। धन विधेयक तथा वित्त विधेयकों को वर्गीकृत किया जा सकता है। वित्त विधेयक दो वर्गों में हो सकता है, जिनमें पहली श्रेणी में वे विधेयक हैं, जिनमें उन विशेष विषयों में से किसी के सभी सम्बन्ध में उपबन्ध किया गया हो, जिनके कारण वह अमुक विधेयक धन विधेयक हो गया है। दूसरी श्रेणी में वे विधेयक आते हैं, जो यदि अधिनियमित हो जायें और लागू हो जायें तो उन पर राज्य की संचित निधि से धन खर्च करने की आवश्यकता पड़े।

पहली श्रेणी के विधेयकों के लिए अनुच्छेद 207 के खण्ड (1) और (3) के अधीन राज्यपाल की सिफारिश की आवश्यकता होती है और दूसरी श्रेणी के विधेयकों के लिए केवल अनुच्छेद 207 के खण्ड (3) के अधीन राज्यपाल की सिफारिश की ही आवश्यकता होती है।

जिन विधेयकों में राज्य के संचित निधि से व्यय अन्तर्ग्रस्त हो, उनके साथ एक वित्तीय ज्ञापन संलग्न किया जाना आवश्यक है, जिसमें यह उल्लिखित किया जाना होता है कि अमुक विधेयक में भविष्य में अमुक धनराशि के व्यय होने की सम्भावना है। ऐसे ज्ञापन में आवर्ती तथा अनावर्ती व्यय के भी प्राक्कलन की आवश्यकता होती है। प्रत्येक विधेयक में नाम, प्रस्तावना, अधिनियम सूत्र, संक्षिप्त नाम, विस्तार

सम्बन्धी खण्ड, प्रारम्भ सम्बन्धी खण्ड, निर्वचन या परिभाषा सम्बन्धी खण्ड, अवधि सम्बन्धी खण्ड, घोषणा सम्बन्धी खण्ड, नियम बनाने सम्बन्धी खण्ड, निरसन तथा व्यावृत्ति खण्ड मुख्य रुप से होते हैं।

अनुसूचियाँ भी विधेयक के भाग होते हैं। इसके अतिरिक्त उद्देश्य तथा कारणों का कथन, खण्डों पर टिप्पणी, प्रत्यायोजित विधान सम्बन्धी ज्ञापन भी संलग्न किये जाने की आवश्यकता होती है। यदि किसी अध्यादेश का विधेयक पुरःस्थापित किया जा रहा हो और उसमें यदि कोई भिन्नता हो अथवा कोई संशोधन हो तो ऐसे संशोधन या भिन्नता का एक अन्य पहलू महत्वपूर्ण है कि यदि किसी अधिनियम में संशोधन के लिए कोई विधेयक लाया जा रहा हो तो उनमें मूल अधिनियम के संगत–अंशों का उद्धरण भी दिया जाना चाहिए, ताकि सदन के सदस्यों को संशोधन किये जाने पर कोई असुविधा न हो।

अब यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि राज्य को किन–किन विषयों में विधि बनाने की शक्ति है। भारत के संविधान की सातवीं अनुसूची में यह स्पष्ट रूप से उल्लिखित है कि किन–किन विषयों में राज्य को विधि बनाने की अनन्य शक्ति प्राप्त है। संविधान में इस हेतु तीन सूचियाँ दी गयी हैं। प्रथम सूची संघ सूची के रुप में जानी जाती है और इसके अन्तर्गत केवल संसद को ही विधि बनाने की शक्ति प्राप्त है। दूसरी सूची राज्य सूची कहलाती है और इसके अन्तर्गत राज्य के विधान मण्डल को विधि बनाने की अनन्य शक्ति प्राप्त है। तीसरी सूची समवर्ती सूची कहलाती है और इसके अन्तर्गत संसद तथा राज्य दोनों को विधि बनाने की शक्ति है। यहाँ पर यह भी स्पष्ट कर दिया जाना समीचीन होता है कि जो विषय संघ एवं राज्य सूची में उल्लिखित नहीं है उनके सम्बन्ध में विधि बनाने की अवशिष्ट शक्ति संसद में निहित है। इसके अतिरिक्त भारतीय संविधान में समवर्ती सूची के सम्बन्ध में यह भी स्पष्ट किया गया है कि यदि संसद अथवा राज्य द्वारा इसके अन्तर्गत बनायी गयी किसी विधि में असंगति होती है तो ऐसी स्थिति में संसद द्वारा

बनायी गयी विधि अविभावी होगी तथा उस राज्य के विधान मण्डल द्वारा बनायी गयी विधि असंगतता की मात्रा तक शून्य होगी।

राज्य के विधान मण्डल में पुरःस्थापित किये जाने वाले विधेयकों को अन्तिम रुप दिये जाने से पूर्व निम्न बातों को ध्यान में रखना आवश्यक होता है;

1. विधेयक में उद्देश्य और कारणों का कथन संलग्न कर दिया गया है;
2. यदि संविधान के किसी उपबन्ध के अधीन विधेयक को पुरःस्थापित अथवा विचार करने के लिए राज्यपाल की सिफारिश की आवश्यकता है तो राज्यपाल की सिफारिश संलग्न कर दी गयी है;
3. संविधान के विभिन्न उपबन्धों के अधीन समस्त शर्तों को पूरा कर लिया गया है;
4. लोक निधि से सम्बन्धित व्यय के खण्डों को तिरछे या मोटे अक्षरों में टंकित/मुद्रित करा दिया गया है;
5. यदि विधेयक के साथ वित्तीय ज्ञापन आवश्यक है तो इसे संलग्न कर दिया गया है;
6. अधीनस्थ विधान सम्बन्धी ज्ञापन संलग्न कर दिया गया है;
7. अध्यादेश के प्रतिस्थानी विधेयक में अन्तर्विष्ट उपान्तरणों का ज्ञापन संलग्न कर दिया गया है;
8. संशोधन विधेयकों में मूल अधिनियम के संगत अंश उद्धरित कर दिये गये हैं;
9. यदि विधेयक में पच्चीस से अधिक खण्ड हैं तो खण्डों का विन्यास संलग्न कर दिया गया है।

उक्त के अतिरिक्त विधेयक के शीर्ष पर विधेयक संख्या का अंकित किया जाना भी आवश्यक होता है। इन सब अपेक्षाओं को पूर्ण करने के उपरान्त विधान मण्डल के समक्ष पुरःस्थापित किये जाने वाले

विधेयक के बाद भारसाधक मंत्री निम्नलिखित में से कोई प्रस्ताव कर सकता है–

1. कि विधेयक पर विचार किया जाये; या
2. कि विधेयक को सभा की प्रवर समिति को अथवा द्वि–सदन हो तो विधान परिषद् को सौंप दिया जाये अथवा विधान परिषद् की सहमति से दोनों सदस्यों की संयुक्त समिति को सौंप दिया जाये;
3. कि विधेयक को उस पर आम जनता की राय जानने के लिए परिचालित कर दिया जाये।

यदि किसी विधेयक को प्रवर या संयुक्त समिति को सौंप दिया जाता है तो उसके प्रतिवेदक को विधान परिषद् में प्रस्तुत किये जाने के पश्चात् भारसाधक मंत्री निम्नलिखित प्रस्तावों में से कोई एक प्रस्ताव प्रस्तुत कर सकता है कि–

1. प्रस्तावित रुप में विधेयक पर विचार किया जाये; अथवा

2. प्रस्तावित रुप में विधेयक को कतिपय खण्डों या संशोधन के संबंध में ही अथवा समिति को विधेयक में कोई महत्वपूर्ण या कोई अतिरिक्त कर के अनुदानों के साथ उसी समिति या एक नयी समिति को पुनः सौंपा जाये; अथवा

3. प्रस्तावित रुप में विधेयक को उस पर विचार या अग्रेतर राय जानने के प्रयोजन के लिए यथाशीघ्र परिचालित किया जाये या पुनः परिचालित किया जाये।

इस प्रकार विधेयक से संबंधित उपरोक्त महत्वपूर्ण पहलुओं पर कार्यवाही सम्पादित की जाती है। जब विधेयक पर विचार करने की बात आती है तो उस पर खण्डवार विचार किया जाना प्रारम्भ किया जाता है। खण्डवार विचार करने के उपरान्त उस पर सदस्यों से मतदान कराया जाता है। उक्त विधेयक पर खण्डवार विचार करते समय कोई सदस्य

उल्लिखित सूचना देकर विधेयक पर कोई संशोधन ला सकता है परन्तु ऐसे संशोधन की ग्राह्यता निम्नलिखित शर्तों के अधीन होती है–

1. प्रस्तावित संशोधन विधेयक की व्याप्ति के भीतर होना चाहिए और जिस खण्ड से उसका सम्बन्ध हो उसके विषय से संगत होना चाहिए।
2. संशोधन सभा के उसी प्रश्न पर पूर्व विनिश्चयों से असंगत नहीं होना चाहिए।
3. कोई संशोधन ऐसा नहीं होना चाहिए जिससे वह खण्ड, जिसे संशोधन करने का उसमें प्रस्ताव हो, दुर्बोध या व्याकरण की दृष्टि से अशुद्ध हो जाय।
4. प्रस्तावित संशोधन तुच्छ या अर्थहीन नहीं होना चाहिए।
5. प्रस्तावित संशोधन का प्रभाव यदि नकारात्मक मत का हो तो ऐसे संशोधन की अनुमति नहीं दी जा सकती है।
6. प्रस्तावित संशोधन विलम्बकारी नहीं होना चाहिए।

उक्त के अतिरिक्त पार्श्व शीर्षकों, को जो कि विधेयक के अंग नहीं बनते हैं तथा किसी विनियोग विधेयक में उल्लिखित किसी अनुदान के लोप का संशोधन स्वीकार नहीं किया जा सकता है क्योंकि अनुदान की मांग सभा द्वारा पहले ही प्रस्तुत की जा चुकी होती है।

यदि राज्यपाल अथवा राष्ट्रपति की सिफारिश की आवश्यकता वाले विधेयकों में कोई संशोधन लाया जा रहा हो तो ऐसे संशोधनों पर यथास्थिति राज्यपाल अथवा राष्ट्रपति की सिफारिश के बिना विचार नहीं किया जा सकता है।

जब किसी विधेयक के सभी खण्ड और अनुसूचियों (यदि कोई हो) पर विचार किया जा चुका हो तो भारसाधक मंत्री उसे पारित किये जाने हेतु प्रस्ताव करता है और तद्नुसार सभा द्वारा उसे पारित किये जाने की कार्यवाही पूर्ण की जाती है। इस प्रकार जब किसी विधेयक को विधान

मण्डल द्वारा पारित कर दिया जाता है तो वह राज्यपाल की अनुमति के लिए उसके समक्ष प्रस्तुत किया जाता है। राज्यपाल ऐसे विधेयक परः–

1. अपनी अनुमति दे सकता है; या
2. अपनी अनुमति रोक सकता है; या
3. यदि वह धन विधेयक न हो तो उसे ऐसे सन्देश के साथ वापस भेज सकता है कि उस विधेयक या उसके कुछ निर्दिष्ट उपबन्धों पर विचार किया जाये या ऐसे संशोधनों के पुनःस्थापित होने की वांछनीयता पर विचार किया जाय, जिनकी सिफारिश उसने अपने संदेश में की हो।

यदि किसी विधेयक को राज्यपाल पुनर्विचार के लिए वापस भेजता है तो ऐसे विधेयक को पुनः विधान मण्डल के समक्ष रखा जाता है और विधान मण्डल द्वारा यदि उस विधेयक को पुनः पारित कर देता है तो उसे पुनः राज्यपाल की अनुमति के लिए भेजा जाता है और राज्यपाल ऐसे विधेयक को पुनः विचार हेतु नहीं भेज सकता है। विधेयक पर राज्यपाल की अनुमति मिलने और अधिनियम बन जाने के उपरान्त प्रत्येक अधिनियम की प्रति विधान मण्डल के पटल पर प्रस्तुत करने का दायित्व विधान मण्डल के सचिव/महासचिव का होता है।

इसी प्रकार गैर–सरकारी सदस्यों के विधेयकों के संबंध में भी सामान्य रुप से वही प्रक्रिया है परन्तु उसकी कुछ विशेष प्रक्रियाएं हैं, जिन्हें निम्नवत रुप में व्यक्त किया जा रहा है।

1. सामान्य रुप से किसी गैर–सरकारी सदस्य को ऐसे विधेयक को पुरःस्थापित करने के लिए एक माह पूर्व सूचना देनी होती है। सूचना की अवधि की गणना विधेयक की सूचना सचिवालय में प्राप्त होने की तारीख से की जाती है।
2. यद्यपि गैर–सरकारी सदस्यों के विधेयकों के प्रारुपण का दायित्व संबंधित सदस्य का होता है, तथापि तकनीकी सहायता और सलाह विधान मण्डल सचिवालय से प्राप्त की जा सकती है।

3. गैर–सरकारी सदस्यों के विधेयकों के निस्तारण के लिए नियत किये गये दिन की कार्य–सूची में पहली मद के रुप में रखी जाती है।
4. सरकारी विधेयकों की भाँति गैर–सरकारी सदस्यों के विधेयकों में दूसरा प्रस्ताव पुनःस्थापित के ही दिन प्रस्तुत नहीं किया जा सकता हैं।
5. विधान मण्डल में विचाराधीन गैर–सरकारी विधेयक के सदस्य को किसी क्रम पर अध्यक्ष की सहमति से प्रस्ताव प्रस्तुत कर वाद–विवाद को स्थगित किया जा सकता है।
6. सरकारी विधेयक पर लागू नियम के अतिरिक्त यदि प्रभारी सदस्य सभा का सदस्य न रहे अथवा वह मंत्री नियुक्त हो जाये तो विधान मण्डल के समक्ष लंबित कोई गैर सदस्य का विधेयक लंबित विधेयकों के रजिस्टर से हटा दिया जाता है। ऐसे विधेयक जिसमें राष्ट्रपति ने अपनी सिफारिश न दी हो, को रजिस्टर से तो नहीं हटाया जाता, लेकिन उसे बैलेट में शामिल नहीं किया जाता है।

उपर्युक्त से यह परिलक्षित होता है कि विधान बनाये जाने की एक निश्चित प्रक्रिया है, और संवैधानिक पहलुओं को दृष्टिगत रखते हुए ही कोई कानून अंतिम रुप देता है।

mÙkj çn'k fo/kku e.My e xj&ljdkjh lnL;k d vljdkjh fo/k;d

जब किन्हीं नई विषय–वस्तुओं पर विधायनों के निर्माण की आवश्यकता होती है या विद्यमान कानूनों में किन्हीं संशोधनों की अनिवार्यता अनुभव होती है तो सिर्फ सरकार ही ऐसे मामलों पर व्यापक स्तर पर कार्यवाही करने का प्राधिकार रखती है। परन्तु सदन में ऐसे भी अवसर आते हैं जब असरकारी सदस्यगण ऐसा महसूस करते हैं कि लोक महत्व के किन्हीं विशिष्ट महत्वपूर्ण विषयों पर सरकार द्वारा अभी तक कोई अधिनियम नहीं बनाये गये हैं या वर्तमान विधियों में जो कमियां दृष्टिगोचर हो रही हैं उनके निवारण के लिए कानूनों में संशोधन नहीं किये गये हैं, तो वह उन विषयों पर सदन में अपनी ओर से असरकारी विधेयकों को प्रस्तुत करते हैं। भारत के संविधान में उपबंधित विधायी प्रक्रियाओं के अन्तर्गत असरकारी विधेयकों के संबंध में अलग से कोई प्रावधान नहीं है, परन्तु संसद तथा राज्य विधान मण्डलों के प्रक्रिया–नियमों में यह एक महत्वपूर्ण संसदीय उपबंध के रूप में उल्लिखित है जिसका उपयोग मा० सदस्यगण सरकार से वांछित विधायनों के बनाने या प्रचलित विधियों में संशोधन करने के अनुरोध के रूप में करते हैं। यह उल्लेखनीय है कि सरकारी विधेयकों को सरकार के मंत्री ही सभा में पुरःस्थापित कर सकते हैं जबकि गैर सरकारी विधेयकों को सदन के असरकारी सदस्यों द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है। यह उल्लेखनीय है कि भारत की स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व भी गैर–सरकारी सदस्यों को लोकहित के विषयों पर असरकारी विधेयक प्रस्तुत करने का अधिकार प्राप्त था। गैर–सरकारी सदस्यों को विधेयक पुरःस्थापित करने का अधिकार सर्वप्रथम गवर्नमेंट ऑफ इंडिया ऐक्ट,

1919 के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा प्रदान किया गया था। तद्नुसार सेन्ट्रल लेजिस्लेटिव असेम्बली, जो 1921 में अस्तित्व में आई, के नियमों तथा स्थायी आदेशों में गैर–सरकारी विधायन को सम्मिलित करने के लिए उपबन्ध किया गया था। उस समय अशासकीय कार्य के लिए उपबन्ध किया गया था। उस समय अशासकीय कार्य के लिए समय का आवंटन गवर्नर–जनरल द्वारा विधान सभा में कार्य की स्थिति पर विचार करने के पश्चात् किया जाता था। सन् 1922 तक गैर–सरकारी विधेयकों तथा संकल्पों के लिए अलग से दिन रखने का उपबन्ध नहीं था, किन्तु धीरे–धीरे इन विधेयकों पर चर्चा के समय को बढ़ाने की मांग जोर पकड़ती गई। इस पर सन् 1922 में प्रक्रिया में परिवर्तन किया गया और इस प्रयोजन के लिए अलग से दिन आवंटित किया जाने लगा। इस दिशा में अगली महत्वपूर्ण प्रगति सन् 1947 में स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् हुई जब नियमों तथा स्थायी आदेशों को समामेलित करके संविधान सभा (विधायी) द्वारा गवर्नमेंट ऑफ इंडिया एक्ट, 1935 की धारा 38 (1) के अधीन नवीन रूप से सदन की प्रक्रिया के नियम बना दिये गये जो 01 सितम्बर, 1948 से प्रवृत्त हुए। इसमें सर्वाधिक महत्वपूर्ण परिवर्तन यह हुआ था कि गैर–सरकारी कार्यों के लिए समय आवंटित करने के लिये सभा के मा० अध्यक्ष को प्राधिकृत कर दिया गया था तथा शब्द ''नान–ऑफिशियल' के स्थान पर शब्द 'प्राइवेट मेम्बर्स' स्थापित कर दिया गया था। इसी प्रकार से, सन् 1953 में गैर–सरकारी सदस्यों के कार्य के लिए शुक्रवार का समय आबंटित करने का प्रश्न लोक सभा की नियम समिति को संदर्भित किया गया था। नियम समिति ने 14 अप्रैल, 1953 को अपनी बैठक में उस समय विद्यमान नियमों में एक संशोधन स्वीकार किया था जिसके अनुसार लोकसभा की शुक्रवार को होने वाली बैठक के अंतिम ढाई घंटे गैर–सरकारी सदस्यों के कार्य के लिए नियत किये जाने लगे तथा गैर सरकारी सदस्यों के विधेयकों को रखे जाने के किसी विशिष्ट दिन की शलाका में जिन विधेयकों को उनके सफल एवं ग्राह्य होने के उपरान्त सदन में पुरःस्थापित करने की

अनुमति मिल चुकी हो उनसे संबंधित प्रस्तावों को उपरोक्त दिन की कार्य–सूची में सबसे अन्त में रखे जाने की व्यवस्था की गयी। इसी तरह से, दिनांक 24 अप्रैल, 1953 को मा० लोकसभा अध्यक्ष के समक्ष अनेक मा० सदस्यों के हस्ताक्षरयुक्त एक याचिका प्रस्तुत की गई जिसमें यह अनुरोध किया गया था कि नियमों में ऐसे संशोधन किए जाएं जिससे गैर–सरकारी सदस्य भी अपने विधेयक सदन में उसी प्रक्रिया के अनुसार पुरःस्थापित कर सकें जो प्रक्रिया सरकारी विधेयकों को पुरःस्थापित करने में अपनाई जाती है। इस प्रस्ताव पर नियम समिति द्वारा 13 अगस्त, 1953 को अपनी बैठक में विचार किया गया और समिति ने प्रक्रिया के नियमों में आवश्यक संशोधन स्वीकार किए। संसद में गैर–सरकारी विधेयकों के सम्बन्ध में अपनायी गयी व्यवस्थाओं को राज्य विधान मण्डलों द्वारा भी विचारोपरान्त अंगीकृत कर लिया गया और तद्नुसार सदन के प्रक्रिया–नियम संशोधित कर दिये गये। उपरिवर्णित संशोधित प्रक्रियानुसार, गैर–सरकारी विधेयकों के पुरःस्थापन, उस पर विचार एवं उसके पारण के अवसरों पर उस पर सरकारी विधेयकों की भांति तीन वाचन होते हैं और इस प्रकार जब कोई असरकारी विधेयक विधान मण्डल द्वारा पारित हो जाता है और उस पर राज्यपाल महोदय की अनुमति प्राप्त हो जाती है तो वह विधेयक राज्य का अधिनियम बन जाता है। विधेयक के अधिनियम बनने की घोषणा सदन में प्रमुख सचिव, विधान सभा द्वारा की जाती है और इस प्रकार से सरकारी विधेयकों की भांति असरकारी विधेयकों के माध्यम से विधान निर्माण की प्रक्रिया पूरी हो जाती है।

इसी संदर्भ में, उत्तर प्रदेश विधान सभा में असरकारी सदस्यों द्वारा प्रस्तुत किये जाने असरकारी विधेयकों के पुरःस्थापन, उन पर विचार एवं उनके पारण तथा कालान्तर में उनके प्रभावों का उल्लेख किया जा रहा है।

उत्तर प्रदेश विधान सभा का गठन सर्वप्रथम वर्ष 1937 में हुआ

था। देश की स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व की विधान सभाओं की कार्यवाहियों के अवलोकन से यह विदित होता है कि गैर–सरकारी विधेयकों के संबंध में जो तत्समय उपबन्ध प्राविधानित थे उनके अन्तर्गत मा० सदस्यों द्वारा असरकारी विधेयकों के पुरःस्थापन की सूचनायें दी जाती थीं और उन पर विस्तृत चर्चायें होती थीं। इसी तरह से, तत्समय प्रस्तुत असरकारी विधेयकों के सम्बन्ध में इस आशय के संशोधन के प्रस्ताव भी प्रस्तुत किये जाते थे कि विधेयकों को प्रवर समिति के सुपुर्द कर दिया जायें या जनता की राय जानने के लिये परिचालित किया जाय। मा० सदस्यों के ऐसे संशोधन के प्रस्तावों को सरकार स्वीकार कर लेती थी या अधिकांश मामलों में सरकार सदन को यह आश्वासन कर लेती थी कि उस विधेयक में अन्तर्ग्रस्त प्रश्न के महत्व का उसे काफी ख्याल है और सरकार खुद इस संबंध में कानून का मसविदा तैयार करा रही है ताकि इस तरह के महत्वपूर्ण कानूनों के बनने में कोई विलम्ब न हो। सरकार के आश्वासन के उपरान्त मा० सदस्यगण अपना विधेयक सदन की अनुमति से वापस ले लेते थे। इसी प्रकार से, महत्वपूर्ण असरकारी विधेयकों पर सरकार का समर्थन मिलने के फलस्वरूप वह उत्तर प्रदेश विधान मण्डल द्वारा पारित भी हुए हैं। इसके उदाहरणस्वरूप विधान मण्डल द्वारा पारित निम्नलिखित गैर सरकारी सदस्यों के असरकारी विधेयकों का विवरण निम्नवत् आगे प्रस्तुत है :–

1– दिनांक 24 फरवरी, 1947 को मा० सदस्य, लेफ्टिनेंट एम. सुल्तान अहमद खाँ द्वारा विधान सभा में पुरःस्थापित महत्वपूर्ण असरकारी विधेयक ''संयुक्त प्रान्त का होम्योपैथिक मेडिसिन बिल, 1947'' उल्लेखनीय है। इस असरकारी विधेयक के द्वारा मा० सदस्य ने यह मांग की थी कि जिस प्रकार से एलोपैथिक, यूनानी एवं आयुर्वेदिक इलाजों की सरकार की मान्यता मिल चुकी है उसी तरह से होम्योपैथी चिकित्सा पद्धति को भी मान्यता दिलाने के उद्देश्य से कानून बनना आवश्यक है। सरकार ने सदन में विधेयक में अन्तर्निहित सिद्धान्तों का स्वागत करते हुए इसे स्वीकार करने में सरकार की

ओर से समर्थन देने का आश्वासन दिया था। इस विधेयक के विधान मण्डल से पारित होने के उपरान्त, राष्ट्रपति महोदय द्वारा उस पर अपनी अनुमति 5 मई, 1952 को प्रदान कर दी गयी थी और वह उत्तर प्रदेश का एक अधिनियम बन गया था।

2– इसी प्रकार से, विधान सभा की मा० सदस्या श्रीमती लक्ष्मी देवी ने दिनांक 12 सितम्बर, 1950 को ''उत्तर प्रदेश बालक विधेयक, 1950'' पुरःस्थापित किया था। इस विधेयक का उद्देश्य यह था कि अवयस्क अपराधी को अपराधी न समझा जाय, बल्कि वह सोसाइटी की संरक्षता में हो, और यह कि उसको राज्य का एक लाभकर नागरिक बनाने के लिए संरक्षण तथा अनुशासन की आवश्यकता है और उन बालकों के लिए भी व्यवस्था हो जिनके लिए देखभाल और रक्षा की आवश्यकता है। मा० सदस्या की ओर से यह भी कहा गया था कि इस सम्बन्ध में चूंकि मद्रास, बम्बई, पंजाब, बंगाल आदि राज्यों में बालकों के सुधार हेतु आवश्यक कानून बन चुके हैं, अतः उत्तर प्रदेश में भी ऐसा कानून बनना आवश्यक है। सरकार ने सदन में विधेयक में अन्तर्निहित सिद्धान्तों का स्वागत करते हुए, उसे पूरा समर्थन देने का आश्वासन दिया था। उक्त विधेयक, जो अंतिम रूप से विधान सभा की दिनांक 28 सितम्बर, 1951 की बैठक में, विधान परिषद् द्वारा किये गये संशोधन को स्वीकार करते हुए, पारित किया गया था, पर राष्ट्रपति महोदय की अनुमति 5 फरवरी, 1952 को प्राप्त हो गयी थी और वह उत्तर प्रदेश का अधिनियम बन गया था।

3– उत्तर प्रदेश राज्य में वर्ष 1961 में '' उत्तर प्रदेश पंचायत राज (संशोधन) विधेयक, 1961'' नामक एक विधेयक विधान परिषद् में पुरःस्थापित हुआ था और वहां से पारित होने के बाद वह विधान सभा की स्वीकृति के लिये भेजा गया था। विधान सभा की स्वीकृति के लिये भेजा गया था। विधान सभा ने उसे स्वीकार किया था और वह अधिनियम बना था।

यह उल्लेखनीय है कि श्री प्रताप चन्द्र आजाद, सदस्य विधान परिषद् ने दिनांक 16 नवम्बर, 1961 को विधान परिषद् में ''उत्तर प्रदेश पंचायत राज (संशोधन) विधेयक, 1961 पुरःस्थापित किया था। दिनांक 9 अप्रैल, 1962 को मा० सदस्य ने विधेयक पर अपने विचार व्यक्त करते हुए विधान परिषद् में कहा था कि ग्राम पंचायतों के अलावा जितनी भी स्वायत्तशासी संस्थायें, म्युनिसिपेलिटीज, डिस्ट्रिक्ट बोर्ड, टाउन एरिया इत्यादि हैं, उनमें यह प्रणाली है कि निर्वाचन के एक साल बाद ही अविश्वास का प्रस्ताव आ सकता है। यदि वह प्रस्ताव गिर जाता है तो दोबारा फिर एक साल के बाद ही अविश्वास का प्रस्ताव लाया जा सकता है। लेकिन गांव सभा के खिलाफ उसके निर्वाचन के दूसरे ही दिन प्रस्ताव लाया जा सकता है। उसमें कोई रोकथाम नहीं है। सरकार की ओर से सदन को अवगत कराया गया कि सरकार स्वयं यह अनुभव करती है कि कानून के अंदर कमी रह गयी है, इसलिए इस पर विचार किये जाने में कोई एतराज नहीं है। विधान परिषद द्वारा इस असरकारी विधेयक के पारित होने के उपरान्त, दिनांक 31 जुलाई, 1962 को सरकार द्वारा इसे विधान सभा के पटल पर रखा गया था विधान सभा ने भी इसे पारित कर दिया और उस पर श्री राज्यपाल की अनुमति मिलने पर वह उत्तर प्रदेश का अधिनियम बन गया था।

उत्तर प्रदेश विधान सभा की प्रक्रिया तथा कार्य–संचालन नियमावली, 1958 के अध्याय–14 में असरकारी सदस्यों द्वारा विधेयक के पुरःस्थापन की अनुज्ञा मांगने के लिए प्रस्ताव की सूचना संबंधी प्रक्रिया उल्लिखित है। इसके अन्तर्गत सदन के असरकारी सदस्य जो किसी विधेयक को पुरःस्थापित करने की अनुज्ञा के लिये प्रस्ताव प्रस्तुत करना चाहते हैं वह अपने इस मंतव्य की लिखित सूचना प्रमुख सचिव, विधान सभा को देते हैं और अपनी सूचना के साथ विधेयक की एक प्रति तथा उद्देश्यों और कारणों का एक विवरण संलग्न करते हैं। प्रत्येक विधेयक में कतिपय अंशों का होना आवश्यक होता है जैसे विधेयक का नाम, प्रस्तावना, अधिनियम सूत्र, संक्षिप्त नाम, विस्तार सम्बन्धी खण्ड, निर्वचन या

परिभाषा सम्बन्धी खण्ड, नियम बनाने की शक्ति यदि प्रत्यायोजित की जा रही हों तो तत्सम्बन्धी खण्ड, निरसन तथा व्यावृति सम्बन्धी खण्ड, अनुसूचियां यदि हों। प्रत्येक विधेयक के साथ उद्देश्य और कारण का विवरण भी दिया जाता है। इसी तरह से, उत्तर प्रदेश विधान सभा के मा० अध्यक्ष द्वारा जारी किये गये प्रक्रिया सम्बन्धी निर्देश के अध्याय–2 में असरकारी विधेयकों की शलाका, सूचनाओं की परिसीमा, सूचना पंजिका, विधेयकों का क्रम आदि का विस्तृत उल्लेख है। उपर्युक्त प्रक्रिया–नियमों के प्राविधानानुसार मा० अध्यक्ष, यदि आवश्यक समझें तो, असरकारी विधेयक में निहित उद्देश्यों और कारणों के विवरण को पुनरीक्षित कर सकते हैं और यदि वह विधेयक मा० अध्यक्ष की राय में राष्ट्रपति महोदय अथवा श्री राज्यपाल की सिफारिश के बिना सदन में पुरःस्थापित नहीं किया जा सकता, तो वह यथाशीघ्र उस विधेयक को, यथास्थिति, राष्ट्रपति महोदय या श्री राज्यपाल को निर्दिष्ट कर सकते हैं। सदन के प्रक्रिया–नियमानुसार विधेयक को पुरःस्थापित करने की अनुज्ञा के लिये प्रस्ताव की सूचना की कालावधि पन्द्रह दिन निर्धारित है परन्तु मा० अध्यक्ष, यदि उचित समझें तो, इससे कम समय की सूचना पर प्रस्ताव किये जाने की आज्ञा दे सकते हैं। सदन की प्रक्रिया नियमावली के नियम 118 के अन्तर्गत जिस विधेयक में व्यय अन्तर्ग्रस्त हो या नियम 119 के अनुसार जिस विधेयक में विधायिनी शक्ति के प्रत्यायोजन के साथ प्रस्थापनायें अन्तर्ग्रस्त हों, उसके साथ जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, तत्सम्बन्धी एक ज्ञापन भी संलग्न करने का प्रावधान है। उपरोक्त प्रक्रिया–नियमावली के नियम 122 के अनुसार जब सभा के किसी असरकारी सदस्य के विधेयक को शलाका में स्थान प्राप्त हो जाता है तो प्रमुख सचिव, विधान सभा उसकी एक प्रतिलिपि उद्देश्य और कारणों के विवरण सहित संबंधित मा० मंत्री को आवश्यक कार्यवाही हेतु भेजते है। मा० अध्यक्ष द्वारा जारी किये गये प्रक्रिया सम्बन्धी निर्देशों के अनुसार, जब तक कि मा० अध्यक्ष अन्यथा निर्देश न दें, असरकारी कार्य के लिये उपलब्ध प्रथम दिवस को असरकारी संकल्प

तथा उसके पश्चात् के असरकारी कार्य के लिए उपलब्ध दिवस को असरकारी विधेयक लिये जाते हैं। इसी क्रमानुसार असरकारी सदस्यों के संकल्प तथा विधेयक पृथक–पृथक उपलब्ध असरकारी दिवसों में लिये जाते है। उपर्युक्त प्रक्रिया नियमावली के नियम 126 के अनुसार, मा० सदस्य द्वारा सदन में पुरः–स्थापित किये जाने के उपरांत विधेयक यदि वह पहले ही प्रकाशित नहीं किया जा चुका हो तो यथाशीघ्र गजट में प्रकाशित कर दिया जाता है। इसी तरह से, उपर्युक्त नियमावली के नियम 174 व 175 के अनुसार, सदन के सामने लम्बित किसी असरकारी सदस्य का विधेयक सदन में लम्बित विधेयकों की पंजिका से हटा दिया जाता है यदि विधेयक के भार–साधक सदस्य सभा के सदस्य न रह जायें या सम्बन्धित सदस्य मंत्री नियुक्त हो जायें। इसी प्रकार से, ऐसे असरकारी विधेयक, जिनके संबंध में दो वर्ष तक सभा में कोई प्रस्ताव प्रस्तुत न हुआ हो, अपास्त समझे जाते है और मा० अध्यक्ष के आदेश से वे विधेयक–पंजिका में से हटा दिये जाते हैं। सांविधानिक व्यवस्था के अन्तर्गत विधान सभा का विघटन हो जाने पर विधान सभा मे लम्बित असरकारी विधेयक व्यपगत हो जाते हैं।

उत्तर प्रदेश विधान सभा की कार्यवाहियों के अवलोकन से यह विदित होता है कि सदन के माननीय सदस्यों द्वारा गैर–सरकारी विधेयकों के सम्बन्ध में प्राविधानित उपबन्धों का समुचित उपयोग किया गया हैं और उनके द्वारा लोक महत्व के विषयों पर असरकारी विधेयक प्रस्तुत किये गये हैं। इनमें सदन की वर्तमान प्रक्रिया तथा कार्य–संचालन नियमावली, 1958 के प्रवर्तन में आने से पूर्व सदन में प्रस्तुत विधेयक यथा–वनस्पति घी में मिलावट रोकने के उपाय किये जाने, विश्वविद्यालयों की स्थापना तथा उनको स्वयत्तता प्रदान किये जाने, धार्मिक न्यायों के मामलों पर नियंत्रण किये जाने, व्यवसायियों को संरक्षण प्रदान किये जाने, हिन्दू विवाह विधि में सुधार और दहेज पर नियंत्रण किये जाने, अनाथालयों और विधवा आश्रमों का निरीक्षण किये जाने, न्यूनतम मजदूरी नियत करने, अनुसूचित जाति एवं पिछड़े वर्गों को संरक्षण तथा

सरकारी सेवाओं में उनको आरक्षण प्रदान किये जाने, बेकारी का निवारण किये जाने, राजस्व सम्बन्धी विधियों में सुधार किये जाने, महत्वपूर्ण साहित्यों का प्रसार–प्रचार किये जाने, अपराध नियंत्रण कानूनों में सुधार किये जाने, न्यायिक व्यवस्था में सुधार किये जाने, जाति–प्रथा का उन्मूलन किये जाने, शिक्षा प्रणाली में सुधार किये जाने, नागरिक सुविधाओं का विस्तार किये जाने, पर्यटन स्थलों का विकास किये जाने, सार्वजनिक भूमि का संरक्षण किये जाने, क्षेत्रीय विकास को बढ़ावा दिये जाने, कृषि भूमि का उद्धार किये जाने, अप्राधिकृत चिकित्सा शिक्षण संस्थाओं पर नियंत्रण किये जाने, नागरिकों को धार्मिक स्वतंत्रता प्रदान किये जाने, पंचायती राज व्यवस्था में सुधार किये जाने, गौ–वंश संरक्षण किये जाने, विधान मण्डल सदस्यों को सुविधायें दिये जाने, वनों का संरक्षण किये जाने, अप्राधिकृत धर्म–स्थलों पर नियंत्रण आदि महत्वपूर्ण रुप से उल्लेखनीय हैं। इसी तरह से, उत्तर प्रदेश विधान सभा की प्रक्रिया तथा कार्य–संचालन नियमावली, 1958 के प्रवर्तन में आने के उपरान्त जिन महत्वपूर्ण असरकारी विधेयकों को मा० सदस्यों द्वारा सदन में प्रस्तुत किये जाने हेतु सूचनायें दी गयी हैं, उनमें उत्तर प्रदेश बेकारी निवारण विधेयक, 1972, उत्तर प्रदेश हरिजन एवं पिछड़ा वर्ग उत्थान विधेयक, 1972 उत्तर प्रदेश लैण्ड रेवन्यू (संशोधन) विधेयक, 1974, उत्तर प्रदेश मानववादी साहित्य प्रचार तथा प्रसार विधेयक, 1974, पूर्वान्चल विश्वविद्यालय जौनपुर विधेयक, 1974, उत्तर प्रदेश हरिजन एवं पिछड़ा वर्ग उत्थान विधेयक, 1974, दण्ड प्रक्रिया संहिता (उत्तर प्रदेश संशोधन) विधेयक, 1977, उत्तर प्रदेश जोत चकबन्दी संशोधन विधेयक, 1978, उत्तर प्रदेश पब्लिक स्कूल शिक्षा प्रणाली उन्मूलन विधेयक, 1978, प्रान्तीय लघुवाद न्यायालय (उत्तर प्रदेश संशोधन) विधेयक, 1978, उत्तर प्रदेश जाति प्रथा उन्मूलन विधेयक, 1978, उत्तर प्रदेश जोत चकबन्दी संशोधन विधेयक, 1978, उत्तर प्रदेश भूमिहीन (भूमि का आवंटन) विधेयक, 1979, उत्तर प्रदेश सार्वजनिक सेवाओं में आरक्षण का विनियमन विधेयक, 1980, उत्तर प्रदेश हिमालय भूमि सुधार

विधेयक, 1980, उत्तर प्रदेश नगर योजना और विकास (द्वितीय संशोधन) विधेयक, 1980, उत्तर प्रदेश राज्य विश्वविद्यालय (तृतीय संशोधन) विधेयक, 1980, उत्तर प्रदेश चल–चित्र (विनियमन संशोधन) विधेयक, 1980, उत्तर प्रदेश पर्यटन विकास, विधेयक, 1980, उत्तर प्रदेश सड़क पार्श्व भूमि नियंत्रण (संशोधन) विधेयक, 1980, उत्तर प्रदेश राज्य विश्वविद्यालय (संशोधन) विधेयक, 1981, संविधान विरोधी साहित्य प्रतिबन्धन विधेयक, 1981, उत्तर प्रदेश नजूल विधेयक, 1982, उत्तर प्रदेश सार्वजनिक भूमि संरक्षण विधेयक, 1983, उत्तर प्रदेश क्षेत्र विकास (संशोधन) विधेयक, 1983, उत्तर प्रदेश विधान सभा सचिवालय (सेवा और भर्ती की शर्ते तथा अधिवर्षता की आयु) विधेयक, 1983, उत्तर प्रदेश अनुपात्पादक कृषि भूमि उद्धार एवं अनिवार्य अन्तरण विधेयक, 1983, उत्तर प्रदेश क्षेत्र विकास (संशोधन) विधेयक, 1983, उत्तर प्रदेश विधान मण्डल (सदस्यों की उपलब्धियां और पेंशन संशोधन) विधेयक, 1983 उत्तर प्रदेश सार्वजनिक सेवाओं में आरक्षण का विनियमन विधेयक, 1985, दण्ड प्रक्रिया संहिता (उत्तर प्रदेश संशोधन) विधेयक, 1985, उत्तर प्रदेश शिक्षा अधिकरण विधेयक, 1985, उत्तर प्रदेश सार्वजनिक सेवाओं में आरक्षण का विनियमन विधेयक, 1985 उत्तर प्रदेश जमींदारी विनाश और भूमि व्यवस्था (संशोधन) विधेयक, 1985, उत्तर प्रदेश नगर योजना और विकास (संशोधन) विधेयक, 1986, उत्तर प्रदेश अप्राधिकृत चिकित्सा शिक्षण संस्था (निवारण) (निरसन) विधेयक, 1987, उत्तर प्रदेश विधान सभा (सचिवालय प्रशासन) विधेयक, 1987, दण्ड प्रक्रिया संहिता (उत्तर प्रदेश संशोधन) विधेयक 1988, उत्तर प्रदेश भूमि विधि (संशोधन) विधेयक, 1988, उत्तर प्रदेश अनुपात्दक कृषि भूमि उद्धार एवं अनिवार्य अन्तरण विधेयक, 1988, उत्तर प्रदेश धर्म की स्वतंत्रता विधेयक, 1989, वन (संरक्षण) (उत्तर प्रदेश संशोधन) विधेयक, 1989, उत्तर प्रदेश समान बेसिक शिक्षा, पाठ्यक्रम उपकरण एवं शुल्क विधेयक, 1989, उत्तर प्रदेश नगरपालिका (संशोधन) विधेयक, 1992, उत्तर प्रदेश नारी कल्याण विधेयक, 1992, उत्तर प्रदेश राज्य विश्वविद्यालय चयन बोर्ड

विधेयक, 1992, उत्तर प्रदेश राज्य विधान मण्डल (सदस्यों की उपलब्धियां और पेंशन) (संशोधन) विधेयक, 1992, उत्तर प्रदेश सेवाकाल में मृत राज्याधीन सेवाओं के आश्रितों के सेवायोजन विधेयक, 1997, उत्तर प्रदेश बेरोजगारी निवारण विधेयक, 1997, उत्तर प्रदेश राज्य मार्ग सम्पत्ति अनुरक्षण विधेयक, 1999, उत्तर प्रदेश विधान मण्डल सचिवालय (भर्ती तथा सेवा की शर्तों का) विधेयक, 2000, उत्तर प्रदेश जनसंख्या नियंत्रण तथा मातृत्व एवं बाल स्वास्थ देखभाल विधेयक, 2004, उत्तर प्रदेश मंत्री तथा विधेयक (आस्तियों तथा दायित्वों का प्रकाशन) (संशोधन) विधेयक, 2005, आदि मुख्य रुप से उल्लेखनीय है।

उत्तर प्रदेश विधान सभा में प्रचलित प्रक्रियानुसार, जब माननीय सदस्यों से असरकारी विधेयकों के प्रस्तुतिकरण की कोई सूचना प्राप्त होती है तो उसका विधान सभा सचिवालय में परीक्षण किया जाता है और यदि वह विधेयक नियमानुकूल पाया जाता है तो उसकी प्रति शासन के संसदीय कार्य विभाग को भेजकर उसका विधिक परीक्षण अग्रिम रुप से करा लिया जाता है और तब उसे असरकारी विधेयकों की शलाका में सम्मिलित किया जाता है। शलाका में विधेयक के सफल हो जाने के उपरान्त, उसकी ग्राह्यता पर मा० अध्यक्ष, विधान सभा का आदेश प्राप्त किया जाता है और मा० अध्यक्ष द्वारा उक्त विधेयक ग्राह्य किये जाने की दशा में उसे एतदर्थ निर्धारित असरकारी दिवस को सदन की कार्य–सूची में सम्मिलित किया जाता है। सदन में उक्त विधेयक भारसाधक सदस्य द्वारा पुरःस्थापित किया जाता है। उत्तर प्रदेश विधान सभा द्वारा ऐसा विधेयक पारित हो जाने के पश्चात् उसे विधान परिषद् की सहमति के लिये भेजा जाता है और यदि वह विधेयक वहां से बिना संशोधन के पारित हो जाता है तो उसे श्री राज्यपाल की अनुमति के लिये भेजा जाता है और उसकी अनुमति मिल जाने पर वह अधिनियम बन जाता है।

उत्तर प्रदेश विधान सभा की कार्यवाहियों में ऐसे भी उदाहरण

देखने को मिलते है जब असरकारी विधेयकों के पुरःस्थापन के अवसर पर ही विरोध किया गया हैं। उदाहरणस्वरुप, ''उत्तर प्रदेश राजबन्दी विधेयक, 1952'' की चर्चा में भाग लेते हुए राज्य के गृहमंत्री मा० डा. सम्पूर्णानन्द ने विधेयक का विरोध करते हुए कहा कि इस विधेयक में राजबन्दी की परिभाषा सही नहीं दी गयी है और यह सिद्ध करना कठिन होगा कि अपराध का कारण और उद्देश्य राजनीतिक है अथवा नहीं। विधेयक पर विचार किये जाने का प्रस्ताव 28 के मुकाबले 14 मतों से अस्वीकृत हो जाने के फलस्वरुप विधेयक पर आगे की कार्यवाही स्थगित कर दी जाती है।

इसी तरह से, ''उत्तर प्रदेश बेकारी निवारण विधेयक, 1972'' पुरःस्थापन के अवसर पर उसका कुछ मा० सदस्य विरोध करने लगे और अनुज्ञा प्राप्त करने के लिए प्रस्तुत प्रस्ताव पर ही मतदान कराये जाने की मांग करने लगे परन्तु कतिपय मा० सदस्यों के हस्तक्षेप से तथा मा० अध्यक्ष की अनुमति से वह विधेयक पुरःस्थापित हो गया। उक्त विधेयक की चर्चा में भाग लेते हुए मा० मुख्यमंत्री ने अवगत कराया कि इस विधेयक की मांग की दिशा में सरकार की ओर से स्वतः कार्यवाही की जा रही है। मा० मुख्यमंत्री के आश्वासन पर मा० सदस्य ने सदन की अनुमति से अपना विधेयक वापस ले लिया।

इसी प्रकार से, '' उत्तर प्रदेश हरिजन एवं पिछड़ा वर्ग उत्थान विधेयक, 1974'' पर विचार किये जाने के प्रस्ताव पर ही सदन में मत विभाजन हो गया और वह प्रस्ताव 160 के मुकाबले 112 मतों से अस्वीकृत हो गया था। इसी तरह से, उत्तर प्रदेश शिक्षण माध्यम विधेयक, 1980 जो दिनांक 4 सितम्बर, 1980 को विधान परिषद् में पुरःस्थापित हुआ था, विधान परिषद् में दिनांक 19 फरवरी, 1981 को चर्चा के उपरान्त उसके पारण के अवसर पर कुछ सदस्यों द्वारा मत विभाजन की मांग प्रस्तुत कर दी गयी और मत विभाजन होने पर 9 के विरुद्ध 25 मतों से वह विधेयक पारित हो गया था। परन्तु, उक्त

विधेयक के सम्बन्ध में विधान सभा में दो वर्षों तक कोई प्रस्ताव प्रस्तुत न होने के कारण वह अपास्त विधेयक की श्रेणी में आ गया।

इसी तरह से, ''उत्तर प्रदेश मानववादी साहित्य प्रचार तथा प्रसार विधेयक, 1974'' सदन में इसलिए नहीं लिया जा सका था क्योंकि प्रस्तुत विधेयक के खण्ड–4 में सरकार के राजस्व में से एक करोड़ रुपये की धनराशि प्रस्तावित निगम को दिये जाने का प्रावधान किया जाना प्रस्तावित था। किन्तु श्री राज्यपाल ने उक्त विधेयक पर विचार करने के लिए भारत के संविधान के अनुच्छेद–207 के खण्ड (3) के अन्तर्गत अपनी सिफारिश विधारित (विथहेल्ड) कर ली थी। अतः उक्त विधेयक पर कोई भी कार्यवाही नहीं की जा सकी थीं।

उत्तर प्रदेश विधान सभा में प्रस्तुत उपरिवर्णित विधेयकों के सम्बन्ध में विधान सभा की कार्यवाहियों के अवलोकन से यह विदित होता है कि अधिकांश विधेयकों पर सदन में सरकार का दृष्टिकोण सकारात्मक होने तथा भविष्य में उन विषयों पर सरकारी विधेयक प्रस्तुत किये जाने का आश्वासन दिये जाने के फलस्वरुप सम्बन्धित मा० सदस्यों द्वारा अपने असरकारी विधेयक वापस लिये जाते रहे हैं और, ऐसा विदित होता है कि सरकार द्वारा आगे चलकर उपरिवर्णित महत्वपूर्ण विषयों पर सरकारी विधेयकों के द्वारा अधिनियम भी बनाये गये है या प्रशासकीय आदेशों द्वारा समुचित कार्यवाहियां की गयी है।

mÙkj çns'k fo/kku e.My dh LFkkiuk vkj fodkl % vf/kfu;ek d vkbu e

स्वाधीनता आंदोलन के समय हमारी सबसे महत्वपूर्ण मांग थी अपने देश के लिये अपना कानून हो जिसे अपने लोग बनायें, अंग्रेज शासक इंग्लैण्ड में नहीं। यह अधिकार हमें मिला तो लेकिन बड़े संघर्ष और बलिदान के बाद। अपना कानून बनाने के मार्ग में सबसे बड़ा व्यवधान था विधेयक पारित करने के लिये न तो हमारे अपने जन प्रतिनिधि थे और न ही विधान मण्डल। विधान मण्डल के स्थान पर गवर्नर जनरल की कौंसिल और उसमें नाम–निर्देशित गिनती के सत्ताधारी अंग्रेज सदस्य होते थे। 1858 में स्वतंत्रता के लिये दुर्द्धर्ष संग्राम के बाद जब 'इंडियन कौंसिल ऐक्ट, 1861' बना तब कहीं जाकर केन्द्र और राज्य स्तर पर विधान मण्डल स्थापित किये जाने का मार्ग प्रशस्त हुआ। इसी अधिनियम के साथ एक और जिस अधिनियम के प्राविधान आगे चलकर विधान मण्डलों को विकसित और व्यवस्थित करने में सहायक हुए वह था 'गवर्नमेण्ट ऑफ इडिया ऐक्ट, 1919' और 1935 में उसमें किये गये व्यापक संशोधन।

bfM;u dkfl Yl ,DV] 1861

उत्तर प्रदेश में आधुनिक रुप के विधान मंडल के सदन का आरम्भ 'इंडियन कौंसिल्स ऐक्ट, 1861' के द्वारा हुआ। इस अधिनियम में बम्बई, मद्रास, कलकत्ता, उत्तर–पश्चिमी प्रान्त एवं अवध (जो अब उत्तर प्रदेश है) और पंजाब में लेजिस्लेटिव कौंसिलों की स्थापना की प्राविधान था जिससे तत्कालीन लेजिस्लेटिव कौंसिलों को, जो केवल कार्यपालक परिषदों के रुप में थीं, कुछ नाम–निर्देशित अशासकीय व्यक्तियों को सम्मिलित करके विधान मण्डल के सदनों के रुप में स्थापित किया जा

सके। यद्यपि बंगाल में लेजिस्लेटिव कौंसिल की स्थापना इस अधिनियम के प्रभाव में आने के तुरन्त पश्चात् 1862 में कर दी गयी और उसके पश्चात् मद्रास और बम्बई में तद्नुसार कार्यवाही की गई, लेकिन उत्तर–पश्चिमी प्रान्त और अवध में इस अधिनियम के अन्तर्गत 1867 तक कोई कार्यवाही नहीं की गयी। 1868 में सर विलियम म्योर ने जो उस समय उत्तर–पश्चिमी प्रान्त एवं अवध के उप राज्यपाल थे, भारत के गवर्नर जनरल और सेक्रेट्री ऑफ स्टेट को पत्र लिखकर आग्रह किया था कि उत्तर–पश्चिमी प्रान्त एवं अवध में भी एक लेजिस्लेटिव कौंसिल का निर्माण किया जाय, किन्तु इस पत्र पर कोई कार्यवाही नहीं की गई। इसके पश्चात् 1885 में उत्तर–पश्चिमी प्रान्त एवं अवध के उप राज्यपाल सर अल्फ्रेड ल्याल ने भारत सरकार से अनुरोध किया कि अब उत्तर–पश्चिमी प्रान्त और अवध में लेजिस्लेटिव कौंसिल की स्थापना के लिए उपयुक्त समय आ गया है और यह भी बताया कि बंगाल, मद्रास और बम्बई में इस प्रकार की लेजिस्लेटिव कौंसिलों की स्थापना काफी समय पूर्व की जा चुकी है। 1861 के ऐक्ट में यथेष्ट व्यवस्था होने के लगभग 25 वर्ष के पश्चात् भी उत्तर–पश्चिमी प्रान्त एवं अवध में लेजिस्लेटिव कौंसिल की स्थापना नहीं की गई। इस पर भारत सरकार ने इंग्लैण्ड में सेक्रेट्री ऑफ स्टेट से पत्र लिखकर अनुरोध किया कि उत्तर–पश्चिमी प्रान्त एवं अवध की जनसंख्या मद्रास या बम्बई प्रेसीडेन्सी से कहीं अधिक है इसलिए वहाँ पर एक लेजिस्लेटिव कौंसिल की स्थापना अत्यन्त आवश्यक है। इस प्रयास के फलस्वरुप 26 नवम्बर 1886, को एक विज्ञप्ति जारी की गई जिसके अनुसार उत्तर–पश्चिमी प्रान्त एवं अवध में लेजिस्लेटिव कौंसिल की स्थापना की गई। ऐसा प्रतीत होता है कि सर अल्फ्रेड ल्याल के सितम्बर 1885 के पत्र का कारण यह भी था कि लगभग उसी समय कांग्रेस की स्थापना के लिए बम्बई में एक अधिवेशन दिसम्बर, 1885 में किये जाने के लिए पत्राचार आरम्भ हो गया था। उत्तर–पश्चिमी प्रान्त एवं अवध में लेजिस्लेटिव कौंसिल की स्थापना में देर का एक कारण यह भी हो सकता है कि

1857 का स्वाधीनता संग्राम यहीं से प्रारम्भ हुआ था। यह भी उल्लेखनीय है कि उत्तर–पश्चिमी प्रान्त एवं अवध में लेजिस्लेटिव कौंसिल की स्थापना के लिए कलकत्ता से विज्ञप्ति उसी दिन प्रसारित की गई जिस दिन वहाँ पर दूसरे कांग्रेस के अधिवेशन में पं. मदन मोहन मालवीय द्वारा प्रस्तुत यह प्रस्ताव पारित किया गया कि उत्तर–पश्चिमी प्रान्त एवं अवध में एक लेजिस्लेटिव कौंसिल की स्थापना की जाये।

स्थापनाकालीन लेजिस्लेटिव कौंसिल के अधिकार अत्यन्त सीमित थे। न उनके सदस्यों को प्रश्न पूछने का अधिकार था न किसी विधेयक को पुरःस्थापित करने का और न किसी प्रकार के संकल्प पारित करने का। लार्ड मैकडोनल ने 1888 में लिखा था कि 1861 के अधिनियम के अन्तर्गत स्थापित लेजिस्लेटिव कौंसिल केवल समितियाँ हैं जिनसे कि शासन परामर्श लेता है और जिनके द्वारा जनता को यह जानकारी हो जाती है कि किस प्रकार का कानून बनाया जा रहा है। पहली लेजिस्लेटिव कौंसिल का प्रथम अधिवेशन 8 जनवरी 1887 को इलाहाबाद में प्रारम्भ हुआ। इस प्रथम लेजिस्लेटिव कौंसिल की सदस्य संख्या 9 थी और उनका कार्यकाल 2 वर्ष था। उस समय प्रक्रिया और कार्य संचालन के केवल 45 नियम थे जो कि केवल उपराज्यपाल द्वारा बनाये गये थे और जिनके बनाने में लेजिस्लेटिव कौंसिल के सदस्यों की कोई भूमिका नहीं थी।

कौंसिल की बैठकों की अध्यक्षता स्वयं उप राज्यपाल करते थे। प्रथम लेजिस्लेटिव कौंसिल की कुल 5 बैठकें हुई और अन्तिम बैठक 14 नवम्बर,1887 को हुई। उसके पश्चात् 3 वर्षों तक उसकी कोई बैठक नहीं हुई जिसका कारण यह भी हो सकता है कि पं. अयोध्यानाथ के प्रयास से इलाहाबाद में 1888 में कांग्रेस का चौथा अधिवेशन पहली बार उत्तर–पश्चिमी प्रान्त एवं अवध में आयोजित किया गया था।

bfM;u dkfIYl ,DV] 1892

ब्रिटिश पार्लियामेन्ट द्वारा भारत में लेजिस्लेटिव कौंसिलों में सुधार

के लिए बनाया गया इंडियन कौंसिल ऐक्ट,1892 3 नवम्बर, 1892 से प्रभावी हुआ। इस अधिनियम के अन्तर्गत स्थापित लेजिस्लेटिव कौंसिलों में सर्वप्रथम कुछ संस्थाओं द्वारा निर्वाचन के पश्चात् संस्तुत सदस्यों के नाम–निर्देशन के सम्बन्ध में प्राविधान किया गया। उत्तर–पश्चिमी प्रान्त व अवध की लेजिस्लेटिव कौंसिल के लिए इस अधिनियम में 15 सदस्यों का प्राविधान था जिनमें से 7 उप राज्यपाल द्वारा नाम निर्देशित होते थे तथा 8 ऐसे सदस्य थे जो विभिन्न संस्थाओं द्वारा निर्वाचित किये जाने के पश्चात् उप राज्यपाल को संस्तुत किये जाते थे कि उनको विधान परिषद् का सदस्य मनोनीत कर दिया जाए।

कौंसिल के सदस्यों को प्रश्न पूछने का अधिकार स्थापना के पांच वर्षों बाद प्राप्त हुआ। यद्यपि वह अधिकार अत्यन्त सीमित था। कौंसिल में पहला प्रश्न 6 दिसम्बर, 1893 को पूछा गया। इसके अतिरिक्त उसे आय–व्ययक पर चर्चा करके शासन को अपने सुझाव देने का भी अधिकार मिल गया था, लेकिन वह किसी प्रकार की कटौती का प्रस्ताव नहीं कर सकती थी। सदस्यों का कार्यकाल केवल दो वर्ष का था। कौंसिल की अध्यक्षता उप राज्यपाल करते थे। कौंसिल की प्रक्रिया नियमावली में भी इन अधिकारों के अनुसार संशोधन कर दिये गये।

bfM;u dkfIYl ,DV] 1909

इंडियन कौंसिल ऐक्ट, 1909 के प्राविधानों के अन्तर्गत इस प्रान्त में (जो कि 1902 के पश्चात् आगरा व अवध का संयुक्त प्रान्त कहा जाने लगा था) लेजिस्लेटिव कौंसिल के सदस्यों की संख्या 46 हो गई जिसमें 20 सरकारी सदस्य थे और 26 गैर–सरकारी। इन 26 गैर सरकारी सदस्यों में से 20 सदस्य निर्वाचित थे और 6 नाम–निर्देशित। ये 20 निर्वाचित सदस्य इलाहाबाद विश्वविद्यालय, बड़ी नगरपालिकाओं, विभिन्न जिला परिषदों, जमींदारों, मुस्लिम समुदाय तथा अपर इंडिया चेम्बर ऑफ कामर्स द्वारा निर्वाचित किये जाते थे। एक अन्तर यह था कि यह सदस्य निर्वाचित हो जाने के पश्चात् राज्यपाल द्वारा अनुमोदित नहीं

किये जाते थे वरन् अपने अधिकार से ही लेजिस्लेटिव कौंसिल के सदस्य हो जाते थे। इस कौंसिल को एक अन्य अधिकार पूरक प्रश्न पूछने, संकल्प पुरःस्थापित या पारित करने और आय–व्ययक में संशोधनों का प्रस्ताव प्रस्तुत करने का मिला। आय–व्ययक में कटौती के प्रस्ताव स्वीकार किये जाने के पश्चात् भारत सरकार को भेज दिये जाते थे और उनके अनुसार आय–व्ययक में संशोधन करने का अधिकार तब भी प्रान्तीय सरकार को था। इस विधान में सर्वप्रथम कौंसिल के असरकारी सदस्यों को राज्यपाल की वित्त समिति के लिए अपने प्रतिनिधि चुनने का अधिकार प्राप्त हुआ।

लेजिस्लेटिव कौंसिल के सदस्यों का कार्यकाल इस अधिनियम के अन्तर्गत 2 वर्ष से बढ़ाकर 3 वर्ष कर दिया गया।

xouesV vkQ bfM;k ,DV] 1919

संयुक्त प्रान्त की लेजिस्लेटिव कौंसिल के विकास में एक महत्वपूर्ण युग गवर्नमेंन्ट ऑफ इंडिया ऐक्ट, 1919 से आरम्भ हुआ। यह ऐक्ट वास्तव में गवर्नमेंट ऑफ इंडिया ऐक्ट, 1915 के संशोधन के रूप में पारित हुआ था। यद्यपि कुछ परिवर्तन लेजिस्लेटिव कौंसिल की सशक्त बनाने के लिये 1915 के ऐक्ट के द्वारा किये गये थे, किन्तु ये केवल नाममात्र के थे। 1919 के ऐक्ट के द्वारा संयुक्त प्रान्त राज्यपाल का प्रान्त बन गया। इससे पहले यह दूसरी श्रेणी का उप राज्यपाल का प्रान्त था। भारत के प्रान्तों में एक मिश्रित व्यवस्था की स्थापना की गई जिसके अन्दर प्रान्त के प्रशासन के संबंध में कुछ विषयों, (विभागों) को हस्तान्तरित विषय कहा जाता था। उन्हें संचालित करने का भार लेजिस्लेटिव कौंसिल के प्रति उत्तरदायी मंत्रियों को दे दिया गया। अन्य विषयों, जिन्हें सुरक्षित विषय का जाता था, में उत्तरदायित्व सीधा राज्यपाल का था जो भारत के गवर्नर जनरल के प्रतिनिधि के रूप में कार्य करता था।

इस ऐक्ट के अन्दर गठित लेजिस्लेटिव कौंसिल के सदस्यों की संख्या बढ़कर 123 हो गई जिसमें 100 निर्वाचित होते थे व 23

राज्यपाल द्वारा मनोनीत। निर्वाचित सदस्यों में से 60 गैर मुस्लिमों द्वारा 29 मुस्लिमों द्वारा, एक यूरोपियनों द्वारा, 6 जमींदारों द्वारा, 3 व्यापारिक संगठनों द्वारा व एक इलाहाबाद विश्वविद्यालय द्वारा निर्वाचित किये जाते थे। इस प्रकार लगभग 50 प्रतिशत सदस्य विभिन्न प्रकार के निर्वाचन मंडलों द्वारा निर्वाचित होते थे। पहले कौंसिल में केवल 121 सदस्य थे क्योंकि राज्यपाल ने सरकारी 17 के स्थान पर केवल 15 सदस्य ही नाम–निर्देशित किये थे।

इस विधान के अन्तर्गत सर्वप्रथम राज्यपाल के स्थान पर लेजिस्लेटिव कौंसिल का अध्यक्ष राज्यपाल द्वारा निर्वाचित सदस्य होता था। कौंसिल के प्रथम अध्यक्ष को मनोनीत करने का अधिकार राज्यपाल को था किन्तु उपाध्यक्ष को निर्वाचित करने का अधिकार आरम्भ से ही लेजिस्लेटिव कौंसिल को था। सदस्यों का कार्यकाल 3 वर्ष ही रहा। इस प्रकार लेजिस्लेटिव कौंसिल ने पहली बार अपना उपाध्यक्ष 21 फरवरी, 1921 को व अध्यक्ष 19 अगस्त, 1925 को चुना।

इस लेजिस्लेटिव कौंसिल को पहली बार निजी विधेयक पुरःस्थापित करने व विविध विभागों के लिए व्यय के लिए मांगों के प्रस्तावों में कटौती के प्रस्ताव करने का अधिकार प्राप्त हुआ। कौंसिल को एक लेखा समिति व अपनी ही स्वायत्त वित्त समिति बनाने का भी अधिकार मिला। वित्त समिति जो पहले राज्यपाल की समिति थी, अब कौंसिल की समिति बन गई, जिसको ऐसे व्ययों पर आय–व्ययक में सम्मिलित किये जाने से पहले, जो वित्त सदस्य उसके समक्ष रखे जाने की सिफारिश करे, स्वीकृति देने का अधिकार था और जिसके समक्ष लगभग सभी नये व्यय विचारार्थ रखे जाते थे। लेजिस्लेटिव कौंसिल को स्थगन प्रस्ताव प्रस्तावित करने का भी अधिकार था। किन्तु स्थगन प्रस्ताव, प्रश्न व संकल्प आदि सभी विषयों पर नहीं दिये जा सकते थे। यद्यपि यह अधिकार अब काफी विस्तृत हो गया था।

xouesaV vkQ bf.M;k ,DV] 1935

गवर्नमेंट ऑफ इंडिया ऐक्ट, 1935 के अन्तर्गत प्रथम बार संयुक्त प्रान्त में द्विसदनीय विधान मंडल का गठन हुआ और विधान सभा विधान मण्डल का प्रथम तथा विधान परिषद् द्वितीय सदन बन गया। विधान परिषद् की सदस्य संख्या 60 निर्धारित की गई जिनमें से सामान्य निर्वाचकों द्वारा 34 मुस्लिम निर्वाचकों द्वारा 17 व एक यूरोपियन निर्वाचकों द्वारा निर्वाचित होते थे और 8 राज्यपाल द्वारा मनोनीत किये जाते थे। विधान परिषद् स्थायी सदन बनाया गया जिसका विघटन नहीं होता था। सदस्यों का कार्यकाल 9 वर्ष का था और जिनमें से लगभग एक तिहाई तीन वर्षों के पश्चात् सेवामुक्त होते थे, यद्यपि वे पुनः निर्वाचित या मनोनीत किये जा सकते थे। इस सेवा नियुक्ति के क्रम को कार्यान्वित करने के लिए आरम्भ में सामान्य निर्वाचकों द्वारा निर्वाचित 34 सदस्यों में से 11 का कार्यकाल 9 वर्षों का, 11 का 6 वर्षों का व शेष 12 का 3 वर्षों का रखा गया। इसी प्रकार मुस्लिम निर्वाचकों द्वारा निर्वाचित 17 सदस्यों में से 6 का कार्यकाल 9 वर्षों का, 6 का 6 वर्ष व 5 का 3 वर्ष निर्धारित किया गया। यूरोपियन सदस्य का कार्यकाल 9 वर्ष का था। नाम–निर्देशित सदस्यों में से भी 3 को 9 वर्षों के लिए 3 को 6 वर्षों के लिए व 2 को 3 वर्षों के लिए नाम–निर्देशित किया गया।

इस विधान के अन्तर्गत विधान मंडल के अधिकार सीमित थे और निम्नलिखित विषयों में राज्यपाल को विशेष उत्तरदायित्व थे जिनके अन्तर्गत आने वाले प्रश्नों, संकल्पों व विधेयकों या उनके खंडों के व उनके प्रस्तुत किये जाने वाले संशोधनों के संबंध में उसकी पूर्व अनुमति ली जानी आवश्यक थी :–

1. प्रान्त के किसी भाग में ऐसी परिस्थिति को रोकने के लिए जिससे प्रान्त की शान्ति व्यवस्था भंग होती हो।
2. अल्पसंख्यकों के आवश्यक हितों की रक्षा।

3. सेवारत, सेवानिवृत्त कर्मचारियों व अधिकारियों या उनके आश्रित व्यक्तियों के ऐसे हितों की सुरक्षा करना जो कि गवर्नमेंट ऑफ इंडिया ऐक्ट के अन्तर्गत उनको प्राप्त हों।

4. प्रान्त के उन भागों में शान्ति व्यवस्था बनाये रखना जिनको किसी रूप में सुरक्षित घोषित किया गया हो।

5. किसी भारतीय रजवाड़े के जो प्रान्त में हो, के हितों की, अधिकारों की व सम्मान की रक्षा करना।

6. ऐसे आदेशों का पालन करना जो उसे इस अधिनियम के अन्तर्गत भारत के गवर्नर जनरल द्वारा दिये गये हों।

अपने इन उत्तरदायित्वों का निर्वहन करने के लिए विधान परिषद् और विधान सभा के लिए राज्यपाल को अपने स्वविवेक से नियम बनाने का अधिकार था जिनको विधान परिषद् और विधान सभा संशोधित नहीं कर सकती थी। साधारणतः यह नियम उन विषयों से संबंधित थे जिनको सदन के समक्ष लाने के लिए गवर्नर को अपने स्वविवेक से अनुमति देने का अधिकार था।

इस प्रकार राज्यपाल के 3 वैधानिक रूप विधान मंडल के संबंध में थे– एक वह रूप जिसमें वह एक संवैधानिक राज्य के प्रमुख की भूमिका का निर्वहन करता था। जब वह इस भूमिका का निर्वहन करता था तब मंत्रिपरिषद् की मंत्रणा उसके लिए बाध्य मानी जाती थी। उसकी दूसरी भूमिका वह थी जब केवल अपने निजी विवेक पर कार्य करता था। इस भूमिका के निर्वहन में यद्यपि उसके लिए आवश्यक था कि वह मंत्रिमंडल की मंत्रणा ले किन्तु उसके लिए यह बाध नहीं था कि वह उसके अनुसार ही कार्य करे। उसकी तीसरी भूमिका थी जिसमें वह अपने स्वविवेक से कार्य करता था। इसके निर्वहन में उसके लिए वह आवश्यक नहीं था कि वह संबंधित विषयों पर मंत्रिमंडल की मंत्रणा भी मांगे।

1935 के ऐक्ट में एक विशेष प्राविधान साधारणतः संसदीय पद्धति के सिद्धान्त के विपरीत था और वह यह था कि कोई भी मंत्री चाहे वह किसी भी सदन का सदस्य हो, दूसरे सदन की कार्यवाही में भाग ले सकता था, किन्तु प्रतिबन्ध यह था कि वह उस सदन में, जिसका वह सदस्य नहीं था, मतदान में भाग नहीं ले सकता था। श्री रमाकांत मालवीय, जो विधान परिषद् के सदस्य थे, सदन के नेता के रूप में कार्य करते थे, यद्यपि वे मंत्री नहीं थे। इससे परिषद् को यह लाभ था कि मंत्रिमंडल के सभी सदस्य विधान परिषद् की कार्यवाही में भाग ले सकते थे और विधान परिषद् को अपने विभाग से संबंधित कार्यकलापों की व उनकी नीतियों की जानकारी अधिकृत रूप से स्वयं देते थे। यद्यपि राज्यपाल के विशेषाधिकारों व उत्तरदायित्व के कारण विधान परिषद् व विधान सभा के वैधानिक व अन्य संसदीय कार्यवाही के अधिकार संकुचित थे तब भी विधान परिषद् को वित्तीय विषयों में पहल करने का अधिकार नहीं था और वित्तीय विधेयक केवल विधान सभा में आरम्भ किये जा सकते थे। किन्तु एक प्रकार के वित्तीय विधेयक जिनके पारित किये जाने के पश्चात् प्रान्त की आय में से किसी प्रकार का व्यय होना आवश्यक हो, विधान परिषद् में भी आरम्भ किये जा सकते थे।

यद्यपि संसदीय पद्धति में, जैसी कि इंग्लैण्ड में चालू है आय–व्ययक द्वितीय सदन, हाउस ऑफ लार्ड्स में प्रेषित नहीं किया जाता, किन्तु विधान परिषद् में आय–व्ययक प्रेषित किया जाना आवश्यक था। किन्तु विधान परिषद् उस पर केवल सामान्य विवाद ही कर सकती थी और निहित मांगों के संबंध में न विधान परिषद् में मांगों में किसी प्रकार का प्रस्ताव किया जा सकता था और न ही विधान परिषद् को उन मांगों में किसी प्रकार की कटौती पास करने का अधिकार था। एक और विशेष बात यह थी कि यद्यपि किसी भी विधेयक, चाहे वह वित्तीय विधेयक हो या किसी अन्य प्रकार का पर दोनों सदनों में मतभेद होने की अवस्था में दोनों सदनों की संयुक्त बैठक में उन मतभेदों के निवारण का

प्राविधान था। एक विशेषता यह भी थी कि उस संयुक्त बैठक में विधान पारित किया गया।

इस विधान के अन्तर्गत विधान परिषद् ने केवल लगभग तीन वर्ष तक ही कार्य किया। 31 जुलाई 1937 से 3 नवम्बर, 1939 तक और 1 अप्रैल, 1946 से 14 अगस्त, 1947 तक। 31 नवम्बर, 1939 से प्रान्त में राज्यपाल का शासन रहा और विधान मंडल निलम्बित रहा।

bfM;u bfMiMsUl ,DV] 1947

इस विधान के अन्तर्गत भारत को स्वतंत्रता प्राप्त हुई और भारत में केन्द्र व प्रान्तों में क्रमशः जो गवर्नर जनरल व राज्यपालों के विशेष उत्तरदायित्व थे, वह समाप्त कर दिये गये। इस कारण जिन–जिन विषयों में प्रान्तों में विधान मंडल के सदनों को किन्हीं प्रकार की संसदीय कार्यवाहियों को करने से पहले राज्यपाल की पूर्व स्वीकृति लेनी होती थी, उसकी आवश्यकता नहीं रही। इसको कार्यान्वित करने के लिए विधान परिषद् ने 1947 में अपनी प्रक्रिया संबंधी नियमावली में संशोधन किये, जिससे कि इस प्रकार की पूर्व स्वीकृति के संबंध में उनमें से प्रतिबन्ध हटा दिये जायें। किन्तु जहाँ तक वित्तीय विषयों में राज्यपाल की सिफारिश की आवश्यकता थी, उसका प्राविधान बना रहे क्योंकि ऐसा प्राविधान इंग्लैण्ड की संसदीय परम्परा पर आधारित था। विधान परिषद् की सदस्य संख्या में व उसके गठन में कोई परिवर्तन नहीं किया गया।

Hkkjr dk lafo/kku] 1950

भारत के संविधान में भी संयुक्त प्रान्त, जिसका नाम बाद में उत्तर प्रदेश कर दिया गया, में द्वितीय सदन के रूप में विधान परिषद् की स्थापना का प्राविधान था किन्तु उसके गठन में मूल परिवर्तन कर दिया गया। इससे पहले प्रतिनिधियों को विधान मंडल में रखने के उद्देश्य से किया जाता था। 1935 के ऐक्ट के अन्तर्गत जो नाम–निर्देशन राज्यपाल द्वारा दिये जाते थे, उनका भी उद्देश्य उन सम्प्रदायों, समुदायों व हितों

के प्रतिनिधित्व को पूरा करने के लिए था जो कि बाकी सदस्यों के निर्वाचन द्वारा विधान परिषद् में न हो पाया हो। किन्तु 1950 के संविधान के अन्तर्गत विधान परिषद् का गठन गुण, व्यवसाय व राजनैतिक प्रतिनिधित्व के आधार पर किया जाने लगा। संविधान के अनुसार विधान परिषद् की सदस्य संख्या विधान सभा की सदस्य की एक चौथाई से अधिक नहीं की जा सकती थी। इसलिए विधान परिषद् की सदस्य संख्या 60 से बढ़ाकर 72 कर दी गई यद्यपि यह विधान सभा की 431 की सदस्य संख्या की एक चौथाई से कहीं कम थीं। विधान परिषद् के गठन के लिए 25 सदस्य विधान सभा के सदस्यों द्वारा, 24 सदस्य स्थानीय निकायों द्वारा 6 प्रदेश के स्नातकों द्वारा व 6 माध्यमिक शिक्षा संस्थाओं के शिक्षकों द्वारा निर्वाचित किये जाते थे। बाकी 12 सदस्य राज्यपाल द्वारा विशेषज्ञता के आधार पर नाम–निर्देशित किये जाते थे। इस प्रकार जहाँ तक विधान परिषद् का संबंध है, उसमें किसी जातीय वर्ग के लिए स्थान सुरक्षित करने का प्राविधान नहीं था, यद्यपि विधान सभा में इस प्रकार का प्राविधान था।

विधान सभा में 85 स्थान अनुसूचित जाति के लिये और 1 स्थान अनुसूचित जनजाति के लिए आरक्षित थे। एक स्थान एंग्लो इंडियन नाम–निर्देशित सदस्य के लिये आरक्षित था।

भारत के संविधान के अन्तर्गत विधान परिषद् का गठन प्रथम बार 1952 में हुआ और जनवरी 1950 से तब तक वह अपने पुराने गठन के अनुसार कार्य करती रही। विधान परिषद् अब भी स्थाई सदन रहा, जिसका विघटन नहीं किया जा सकता था। सदस्यों का कार्यकाल 6 वर्ष, 4 वर्ष और 2 वर्ष के लिए निर्धारित किया गया। तत्पश्चात् प्रत्येक दो वर्ष के बाद सेवामुक्त होने वाले सदस्यों का स्थान भरने के लिए संबंधित निर्वाचन–क्षेत्र से निर्वाचन या नाम–निर्देशन किये जाने लगे। सेवामुक्त सदस्य, निर्वाचन व नाम–निर्देशन के लिए असीमित काल तक के लिए अर्ह थे।

भारत के संविधान द्वारा भी लगभग वही संघीय प्रणाली जारी रखी गई जो 1935 के ऐक्ट के अन्तर्गत प्रथम बार भारत में स्थापित की गई थी, यद्यपि केन्द्र व प्रदेशों की विधायिनी, कार्यपालिक व न्यायपालिका की शंक्तियों में कुछ महत्वपूर्ण संशोधन किये गये। संसदीय परम्परा के अनुसार विधान परिषद् के वित्तीय अधिकार सीमित थे। विधान परिषद् को उसी प्रकार से केवल उन पर सामान्य वाद–विवाद करने का अधिकार था। इसी प्रकार पहली बार प्रदेशों में विधान मंडल का सत्र आरम्भ होने पर राज्यपाल के अभिभाषण की नीतियों के संबंध में वाद–विवाद प्राविधान 1950 के संविधान में किया गया। बाद में ऐसे अभिभाषण केवल विधान मंडल के वर्ष के प्रथम सत्र में ही आवश्यक कर दिये गये। संसदीय परम्परा के अनुसार संविधान में यह भी उपबन्ध है कि प्रादेशिक मंत्रिमंडल केवल विधान सभा के प्रति उत्तरदायी होगा। किन्तु विधान परिषद् ने अपनी नियमावली में एक इस प्रकार का उपबन्ध किया कि विधान परिषद् मंत्रिमण्डल की नीतियों के प्रति अपनी असहमति प्रकट कर सकता है और इस प्राविधान का विधान परिषद द्वारा प्रयोग भी किया गया।

क्योंकि भारत के संविधान द्वारा स्थापित संसदीय लोकतंत्र को वही रूप दिया गया है जो सामान्यतः इंग्लैण्ड की संसदीय प्रणाली में है। इसलिए एक नया वित्तीय उपबन्ध संविधान में धन विधेयकों से संबंधित है। इस प्रकार का उपबन्ध 1935 के ऐक्ट में नहीं था। इस उपबन्ध के अनुसार धन विधेयक के संबंध में विधान परिषद् के अधिकार ऐसे विधेयकों को केवल 14 दिनों तक ही रोक रखने तक सीमित है और यदि धन विधेयक इस कालावधि में विधान सभा को वापस नहीं किया जाता है तो वह उस रूप में, जिस रूप में विधान सभा ने उसे पारित किया था, राज्यपाल की सहमति के लिए भेजा जा सकता है। ऐसे विधेयकों में विधान परिषद् द्वारा किए गए संशोधनों का भी कोई अस्तित्व नहीं है क्योंकि यह विधान सभा पर आधारित है कि वह उन संशोधनों को स्वीकार करे या न करे और विधान सभा के असहमत होने पर ऐसे संशोधन निरर्थक समझे जाते हैं। अन्य विधेयकों के

संबंध में जिनमें वित्तीय विधेयक भी सम्मिलित हैं, विधान परिषद् के अधिकार 1935 के ऐक्ट के अन्तर्गत उसे मिले हुए अधिकारों से कुछ कम कर दिये गये हैं। भारत के संविधान के अनुसार यदि किन्हीं संशोधनों के संबंध में विधान सभा एवं विधान परिषद् में असहमति हो तो वह विधेयक दोबारा विधान परिषद् को भेजा जाना आवश्यक है और विधान परिषद् 3 माह के अन्दर या तो विधान सभा के निर्णय से सहमति प्रकट करे या अपने द्वारा किये गये संशोधनों का पुनः अनुमोदन करे। इसके पश्चात् विधान सभा के लिए यह आवश्यक है कि वह उस पर पुनः विचार करे और विधान परिषद् के असहमत होने पर दोबारा विधान परिषद् को भेजें। यदि विधान परिषद् एक माह तक उस विधेयक को विधान सभा को वापस नहीं भेजता है या अपने संशोधनों को वापस नहीं लेता है तो विधानसभा को अधिकार है कि वह या तो विधान परिषद के द्वारा किये गये संशोधनों को स्वीकार कर ले या विधेयक को राज्यपाल की अनुमति के लिए उस रूप में भेज दे, जिसमें उसने उसे अन्तिम बार पारित किया था।

संविधान के 7वें संशोधन अधिनियम 1956 द्वारा यह प्राविधान किया गया कि विधान परिषद की सदस्य संख्या विधान सभा की सदस्य संख्या के एक चौथाई के बजाय एक तिहाई तक हो सकती है। इस संशोधन के अनुसार 1958 में विधान परिषद् की सदस्य संख्या 72 से बढ़ाकर 108 कर दी गई जिसमें विधान सभा के सदस्यों द्वारा निर्वाचित सदस्य 39, स्थानीय संस्थाओं द्वारा निर्वाचित 39 शिक्षकों द्वारा निर्वाचित 09 व स्नातकों द्वारा निर्वाचित 09 सदस्य व नाम–निर्देशित 12 सदस्य थे। 1958 में विधान परिषद् के गठन का और जिन राज्यों में विधान परिषद् है, उनकी समाप्ति के लिए विधान सभा के यदि अपनी पूरी सदस्य संख्या के और उपस्थित मत देन वाले सदस्यों के दो तिहाई बहुमत से यदि ऐसा प्रस्ताव पारित कर दे तो संघीय संसद एक विधेयक द्वारा विधान परिषद् का गठन या उसकी समाप्ति कर सकता है।

mÙkj çn'k fo/kku lHkk dh çfØ;k rFkk dk;&lpkyu fu;ekoyh] 1958 e fo/kku fuek.k lc/kh fu;e

fo/kku fuek.k

¼d½ fo/k;dk dk ij%LFkkiu rFkk çdk'ku

fu;e 114&fo/k;dk dk ij%LFkkfir dju l iol çdkf'kr dju dh v/;{k dh 'kfDr& अध्यक्ष से इस विषय की प्रार्थना की जाने पर वे किसी सरकारी विधेयक(उद्देश्यों और कारणों के विवरण एवं विधायिनी शक्ति के ''प्रत्यायोजन तथा वित्तीय आभारों से संबंधित ज्ञापनों सहित, यदि कोई हों, और यदि आवश्यक हो तो राष्ट्रपति की पूर्व मंजूरी या राज्यपाल की सिफारिश सहित) गजट में प्रकाशन का आदेश दे सकेंगे यद्यपि विधेयक को पुरःस्थापित करने की अनुज्ञा के लिए कोई प्रस्ताव नहीं रखा गया हो। उस दशा में विधेयक को पुरःस्थापित करने की अनुज्ञा के लिए प्रस्ताव करना आवश्यक नहीं होगा और यदि विधेयक बाद में पुरःस्थापित किया जाय तो उसको पुनः प्रकाशित करने की आवश्यकता नहीं होगी :

परन्तु साधारणतया विधेयक को इस प्रकार गजट में प्रकाशित करना आवश्यक नहीं होगा यदि सदन सत्र में हो।

fu;e 115&vljdkjh lnL; }kjk fo/k;d d ij%LFkkiu dh vuKk ekxu d fy, çLrko dh lpuk&(1) असरकारी सदस्य जो किसी विधेयक को पुरःस्थापित करने की अनुज्ञा के लिए प्रस्ताव करना चाहते हों अपने इस अभिप्राय की सूचना देंगे और सूचना के साथ विधेयक की एक प्रति तथा उद्देश्यों और कारणों का एक विवरण

जिसमें प्रतर्क नहीं होंगे, भेजेंगे :

परन्तु अध्यक्ष, यदि ठीक समझें, उद्देश्यों और कारणों के विवरण को पुनरीक्षित कर सकेंगे।

(2) यदि किसी ऐसे विधेयक को पुरःस्थापित करने की सूचना दी जाय तो अध्यक्ष की राय में राष्ट्रपति की पूर्व मंजूरी अथवा राज्यपाल की सिफारिश के बिना पुरःस्थापित नहीं किया जा सकता, तो अध्यक्ष सूचना की प्राप्ति के उपरान्त यथाशीघ्र उस विधेयक को, यथास्थिति, राष्ट्रपति या राज्यपाल को निर्दिष्ट करेंगे।

(3) इस नियम के अर्न्तगत विधेयक को पुरःस्थापित करने की अनुज्ञा के लिए प्रस्ताव की सूचना की कालावधि पन्द्रह दिन होगी, यदि अध्यक्ष इससे कम समय की सूचना पर प्रस्ताव किये जाने की अनुज्ञा न दे दें।

fu;e 116&lnu esa yfEcr fdlh vU; fo/k;d ij fuHkj fo/k;d dk ijLFkkiu–कोई विधेयक जो सदन में किसी अन्य लम्बित विधेयक पर पूर्णतः या अंशतः निर्भर है उस विधेयक के पारित हो जाने की प्रत्याशा में, जिस पर वह निर्भर है, सदन में पुरःस्थापित किया जा सकेगा :

परन्तु ऐसा विधेयक सदन में विचार किये जाने तथा पारित किये जाने के लिए तभी लिया जायेगा जबकि लम्बित विधेयक दोनों सदनों द्वारा पारित किया जा चुका हो, और, यथास्थिति, राष्ट्रपति अथवा राज्यपाल द्वारा उस पर अनुमति दी जा चुकी हो।

fu;e 117&rRle fo/k;d dh lpuk&जब कोई विधेयक सदन में लम्बित हो तो किसी तत्सम विधेयक की सूचना को चाहे वह लम्बित विधेयक के पुरःस्थापन से पहले प्राप्त हुई हो या बाद में, जब तक कि अध्यक्ष अन्यथा निदेश न दें, यथास्थिति, लम्बित सूचनाओं की सूची से निकाल दिया जायेगा या उसमें प्रविष्ट नहीं किया जायेगा।

fu;e 118&fo/k;dk dk foÙkh; Kkiu vkj fo/k;dk e /ku [k.M&(1) जिस विधेयक में व्यय अन्तर्ग्रस्त हो, उसके साथ एक वित्तीय ज्ञापन होगा जिसमें व्यय अन्तर्ग्रस्त होने वाले खण्डों की ओर विशेषतया ध्यान दिलाया जायेगा और उसमें उस आवर्तक तथा अनावर्तक व्यय का भी प्राक्कलन दिया जायेगा जो विधेयक के विधि रूप में पारित होने की अवस्था में अन्तर्ग्रस्त हो।

(2) विधेयकों के जिन खण्डों या उपबन्धों में लोकनिधियों में से व्यय अर्न्तग्रस्त हो वे अपेक्षाकृत मोटे अक्षरों या वक्राक्षरों में छापे जायेंगे : परन्तु जहां किसी विधेयक में कोई खण्ड जिसमें व्यय अन्तर्ग्रस्त हो, मोटे टाइप या वक्राक्षरों में न छापा जाए तो अध्यक्ष, विधेयक के भार–साधक सदस्य को ऐसे खण्डों को सभा की जानकारी में लाने की अनुज्ञा दे सकेंगे।

fu;e 119&fo/kkf;uh 'kfDr çR;k;kftr dju oky foèk;dk dk 0;k[;kRed Kkiu&जिस विधेयक में विधायिनी शक्ति के प्रत्यायोजन के साथ प्रस्थापनायें अन्तर्ग्रस्त हों उसके साथ एक ज्ञापन होगा जिसमें ऐसी प्रस्थापनाओं की व्याप्ति की व्याख्या होगी।

fu;e 120&v/;kn'kk dk lEcU/k e fooj.k&(1) जब कभी कोई अध्यादेश प्रख्यापित किया जाए तो उसके प्रख्यापन के बाद, यथास्थिति, अनुगामी सत्र अथवा उपवेशन के प्रारम्भ में अध्यादेश की प्रतिलिपि सहित ऐसा विवरण पटल पर रखा जायेगा जिसमें उन परिस्थितियों को स्पष्ट किया गया हो जिनके कारण अध्यादेश द्वारा तुरन्त विधान बनाना आवश्यक हो गया था।

(2) तदुपरान्त कोई भी सदस्य तीन दिन की सूचना देकर अध्यादेश का अनुमोदन करने का संकल्प प्रस्तुत कर सकेगा और यदि ऐसा संकल्प स्वीकृत हो जाए तो वह परिषद् के पास उसकी सहमति के लिए भेज दिया जाएगा।

(3) जब कभी कोई विधेयक जो किसी अध्यादेश को रूपभेद सहित प्रतिस्थापित करता हो, सदन में पुरःस्थापित किया जाए तो सदन के समक्ष विधेयक के साथ एक विवरण भी रखा जाएगा जिसमें उन परिस्थितियों को स्पष्ट किया गया हो जिनके कारण ऐसा रूपभेद करना आवश्यक हो गया था।

fu;e 121&vljdkjh lnL;ksa ds fo/ks;dksa esa vxzrk&(1) विधेयकों की सूचनाओं की, जो असरकारी सदस्यों ने प्रस्तुत की हो, सापेक्ष अग्रेता का निर्णय शलाका द्वारा होगा, जो अध्यक्ष द्वारा दिये गये उन निर्देशों के अनुसार उस दिवस को होगा जो अध्यक्ष नियत करें और जो ऐसे दिवस से कम से कम पन्द्रह दिन पूर्व होगा जिसके लिये शलाका की जाय।

(2) असरकारी सदस्यों के विधेयकों की सापेक्ष अग्रेता, जो सदन में लम्बित हो, निम्न क्रम में निर्धारित की जायेगीः—

(क) वे विधेयक जो राज्यपाल द्वारा अनुच्छेद 200 और 201 के अन्तर्गत और संदेश सहित वापस किये गये हों;

(ख) वे विधेयक जिनके सम्बन्ध में उनके पारित किये जाने का प्रस्ताव प्रस्तुत किया जा चुका हो;

(ग) वे विधेयक जो सभा द्वारा पारित तथा परिषद् द्वारा संशोधन सहित लौटाये गये हों;

(घ) वे विधेयक जो परिषद् द्वारा पारित तथा सभा को पहुंचाये गये हों;

(ड.) वे विधेयक जिनके सम्बन्ध में वह प्रस्ताव स्वीकृत हो चुका है कि विधेयक पर विचार किया जाय;

(च) वे विधेयक जिनके सम्बन्ध में प्रवर समिति का प्रतिवेदन उपस्थित किया जा चुका हो;

(छ) वे विधेयक जो राय जानने के लिये परिचालित किये गये हों;

(ज) वे विधेयक जिनका पुरःस्थापन हो चुका हो और जिनके सम्बन्ध में कोई और प्रस्ताव उपस्थित या स्वीकृत न किया गया हो;

(झ) अन्य विधेयक।

(3) उप नियम (2) के किसी एक खण्ड के अन्तर्गत आने वाले विधेयकों की सापेक्ष अग्रेता शलाका द्वारा ऐसे समय पर और ऐसे ढंग से, जैसा कि अध्यक्ष निदेश दें, निर्धारित की जाएगी।

(4) अध्यक्ष विशेष आदेश द्वारा जो सभा में विघोषित किया जायेगा उप नियम(2) में दिये गये विधेयकों की सापेक्ष अग्रेता में ऐसे परिवर्तन कर सकेंगे जो वे आवश्यक या सुविधाजनक समझें।

fu;e 122&e=h dk ljdkjh lnL; d fo/k;d dh çfrfyfi Hkstuk& जब कभी सभा को कोई असरकारी सदस्य किसी विधेयक को पुरःस्थापित करने की अनुज्ञा मांगने के लिये प्रस्ताव प्रस्तुत करने के अभिप्राय की सूचना दे और यदि उसे शलाका में स्थान प्राप्त हो जाए तो प्रमुख सचिव यथाशीघ्र उसकी एक प्रतिलिपि उद्देश्यों और कारणों के विवरण सहित सम्बन्धित मंत्री को भेज देंगे।

fu;e 123&ijLFkkiu dh vuKk d fy, çLrko&(1) नियम–114 के अधीन रहते हुए किसी भी विधेयक की पुरःस्थापना के पूर्व सदन में तदर्थ प्रस्ताव द्वारा अनुज्ञा प्राप्त की जाएगी, परन्तु अध्यक्ष के आदेश के अधीन रहते हुए उस समय तक ऐसा कोई प्रस्ताव नहीं किया जाएगा जब तक कि विधेयक की प्रतिलिपियां प्रस्ताव करने के दिन से पूर्व दिनांक को सदस्यों को उपलब्ध न करा दी गयी हों।

(2) यदि ऐसे प्रस्ताव का विरोध किया जाये तो अध्यक्ष, यदि वे

ठीक समझें, प्रस्ताव करने वाले सदस्य और प्रस्ताव का विरोध करने वाले सदस्य द्वारा संक्षिप्त व्याख्यात्मक वक्तव्य दिये जाने की अनुज्ञा देने के पश्चात् और बिना वाद–विवाद के प्रश्न रख सकेंगे :

परन्तु जब प्रस्ताव का इस आधार पर विरोध किया जाय कि वह विधेयक ऐसे विधान का सूत्रपात करता है जो सभा की विधायिनी क्षमता से परे है, तो अध्यक्ष उस पर पूर्णरूपेण चर्चा की अनुज्ञा दे सकेंगे।

fu;e 124&fo/k;d dk ijkLFkkiu& नियम 114 अथवा नियम 123, जैसी भी स्थिति हो, वर्णित प्रक्रिया के उपरान्त विधेयक ''भार साधक सदस्य'' द्वारा पुरःस्थापित किया जाएगा।

fu;e 125&fo/k;d d lEc) i= ekxu dh 'kfDr& विधेयक के पुरःस्थापन के उपरान्त कोई भी सदस्य यह मांग कर सकेंगे कि ऐसे पत्रों की प्रतिलिपियां, यदि कोई हों, जिन पर विधेयक आधारित हो और गोपनीय न हों, सदन के पटल पर रख दी जाएं।

fu;e 126&fo/k;dk dk çdk'ku&विधेयक के पुरःस्थापन किये जाने के पश्चात् विधेयक, यदि वह पहले ही प्रकाशित नहीं किया जा चुका हो, यथाशीघ्र गजट में प्रकाशित किया जाएगा।

fu;e 127&jkT;iky rFkk jk"Vifr dk fo/k;d dh çfrfyfi Hkstuk& सभा में पुरःस्थापन के पश्चात् प्रत्येक पुरःस्थापित विधेयक की प्रतिलिपि प्रमुख सचिव द्वारा तुरन्त ही राज्यपाल तथा राष्ट्रपति को सूचनार्थ भेज दी जायेगी।

¼[k½ ijkLFkkiu dk mijkUr çLrko

fu;e 128&ijkLFkkiu dk mijkUr çLrko& किसी विधेयक के पुरःस्थापन के उपरान्त या किसी अनुवर्ती अवसर पर विधेयक भार–साधक सदस्य निम्नलिखित प्रस्तावों में कोई एक प्रस्ताव कर सकेंगे, अर्थात्–

(क) उसे सभा द्वारा तत्काल ही या भविष्य में किसी ऐसे दिन, जिसे उसी समय निर्धारित किया जाएगा, विचारार्थ ले लिया जाए; या

(ख) उसे ऐसे अनुदेशों के सहित जो कि आवश्यक समझे जाएं, सदन की प्रवर समिति को निर्दिष्ट कर दिया जाए, या

(ग) उसे ऐसे अनुदेशों के सहित जो कि आवश्यक समझे जाएं, संयुक्त प्रवर समिति को निर्दिष्ट कर दिया जाए, या

(घ) उस पर राय जानने के प्रयोजन से परिचालित किया जाए;

परन्तु उप–नियम(ग) के अन्तर्गत निर्देश का प्रस्ताव ऐसे विधेयक के सम्बन्ध में नहीं किया जाएगा जिसमें अनुच्छेद 199 के खण्ड (1) के उपखण्ड (क) से (च) में उल्लिखित विषयों में से किसी के लिए उपबन्ध हों;

किन्तु उस समय तक ऐसा कोई प्रस्ताव नहीं किया जाएगा जब तक कि विधेयक की प्रतिलिपियां प्रस्ताव करने के दिन से तीन दिन पूर्व सदस्यों को उपलब्ध न करा दी गयी हों और सदस्यों द्वारा की गयी आपत्ति अभिभावी होगी जब तक कि अध्यक्ष प्रस्ताव करने की अनुज्ञा न दे दें।

fu;e&129 fo/k;dk dk fl)kUrk ij ppk&(1) उस दिन जब नियम 128 में निर्दिष्ट कोई प्रस्ताव किया जाए या किसी अनुवर्ती दिन जिसके लिए चर्चा स्थगित की जाए, विधेयक के सिद्धान्तों और उसके उपबन्धों पर सामान्य चर्चा की जा सकेगी, किन्तु विधेयक के ब्योरे पर उससे अधिक चर्चा नहीं होगी जितनी कि उसके सिद्धान्तों की व्याख्या के लिए आवश्यक हो।

(2) इस प्रक्रम पर विधेयक में संशोधन प्रस्तुत नहीं किये जा सकेंगे किन्तु यदि विधेयक भार–साधक सदस्य यह प्रस्ताव करे कि विधेयक–

(क) विचारार्थ लिया जाए, तो कोई सदस्य संशोधन के रूप में यह प्रस्ताव कर सकेंगे कि विधेयक ऐसे अनुदेशों के सहित जो कि आवश्यक समझे जायें एक प्रवर समिति या संयुक्त प्रवर समिति को निर्दिष्ट किया जाए या उस पर राय जानने के लिए उस तिथि तक जो उस प्रस्ताव में दी गयी हो, परिचालित किया जाए, अथवा

(ख) एक प्रवर समिति या संयुक्त प्रवर समिति को निर्दिष्ट किया जाए.....कोई सदस्य संशोधन के रूप में यह प्रस्ताव कर सकेंगे कि विधेयक को ..... ऐसे अनुदेशों के सहित जो कि आवश्यक समझे जाएं, यथास्थिति, एक संयुक्त प्रवर समिति या प्रवर समिति को निर्दिष्ट किया जाए या विधेयक को राय प्राप्त करने के लिए उस तिथि तक जो उस प्रस्ताव में दी गयी हो, परिचालित किया जाए।

(3) (क) जब पूर्वगामी नियमों के अन्तर्गत किसी विधेयक को राय जानने के लिए परिचालित किये जाने पर रायें प्राप्त हो गयी हों तो राय प्राप्त होने के अन्तिम तिथि के उपरान्त यथासम्भव शीघ्र प्रमुख सचिव द्वारा एक ऐसा विवरण पटल रखा जाएगा जिसमें रायों का सारांश दिया हो।

(ख) तदुपरान्त विधेयक भार–साधक सदस्य यदि वे अपने विधेयक पर इसके आगे कार्यवाही करना चाहते हों, प्रस्ताव करेंगे कि विधेयक एक प्रवर समिति या संयुक्त प्रवर समिति को निर्दिष्ट कर दिया जाए, यदि अध्यक्ष यह प्रस्ताव करने की अनुज्ञा न दे दें कि विधेयक पर तत्काल या किसी भावी तिथि को विचार किया जाए :

परन्तु इस नियम के अन्तर्गत संयुक्त प्रवर समिति की नियुक्ति के लिए कोई संशोधन या प्रस्ताव किसी ऐसे विधेयक के सम्बन्ध में नहीं किया जाएगा जिसमें अनुच्छेद 199 के खण्ड (1) के उपखण्ड (क) से (च) में उल्लिखित विषयों में से किसी के लिए उपबन्ध हो।

fu;e 130&çoj lfefr dk xfBr dju dk çLrko& जब सभा किसी विधेयक को प्रवर समिति को निर्दिष्ट करना निश्चित करें तो

प्रवर समिति नियमानुसार गठित करने का प्रस्ताव किया जाएगा।

fu;e&131&0;fDr tk fo/k;dk d lEcU/k e çLrko dj ldxk& विधेयक के भार–साधक सदस्य के अतिरिक्त किसी अन्य सदस्य द्वारा यह प्रस्ताव प्रस्तुत नहीं किया जाएगा कि विधेयक पर विचार किया जाए या विधेयक को पारित किया जाए और विधेयक के भार–साधक सदस्य के अतिरिक्त किसी अन्य सदस्य द्वारा विधेयक के भारत–साधक सदस्य द्वारा किये गये प्रस्ताव पर संशोधन के रूप के अतिरिक्त यह प्रस्ताव नहीं किया जाएगा कि विधेयक को प्रवर समिति या संयुक्त प्रवर समिति को निर्दिष्ट किया जाए या उस पर राय जानने के लिए उसे परिचालित किया जाए या पुनः परिचालित किया जाए।

परन्तु यदि विधेयक के भार–साधक सदस्य अपने विधेयक के सम्बन्ध में पुरःस्थापन के उपरान्त किसी अनुवर्ती प्रक्रम पर अगला प्रस्ताव प्रस्तुत करने में ऐसे कारणों से असमर्थ हों, जिन्हें अध्यक्ष पर्याप्त समझें तो वे किसी अन्य सदस्य को अध्यक्ष के अनुमोदन से उस विशेष प्रस्ताव को प्रस्तुत करने के लिये प्राधिकृत कर सकेंगे।

0;k[;k&परन्तुक में दिये गये उपबन्धों के रहते हुए भी विधेयक भार–साधक सदस्य वही रहेंगे, जिन्होंने विधेयक पुरःस्थापित किया है।

¼x½ çoj lfefr d çfrosnu d miLFkku d mijkUr çfØ;k

fu;e 132&çoj@l;qDr çoj lfefr d çfrosnu d miLFkku d mijkUr çLrqr fd;s tkus oky çLrko&(1) यथास्थिति किसी विधेयक पर सदन की प्रवर समिति अथवा सदनों की संयुक्त प्रवर समिति के अन्तिम प्रतिवेदन के उपस्थान के उपरान्त भार–साधक सदस्य प्रस्ताव कर सकेंगे कि–

(क) यथास्थिति, सदन की प्रवर समिति द्वारा अथवा सदनों

की संयुक्त प्रवर समिति द्वारा प्रतिवेदन रूप में विधेयक पर विचार किया जाए :

परन्तु यदि प्रतिवेदन की प्रतिलिपि सदस्यों के उपयोग के लिए प्रस्ताव किये जाने के दिन से तीन दिन पहले उपलब्ध न कर दी गई हो तो कोई सदस्य इस तरह विचार किये जाने पर आपत्ति कर सकेंगे, यदि अध्यक्ष प्रतिवेदन पर विचार किये जाने की अनुमति न दें, तो ऐसी आपत्ति अभिभावी होगी, या

(ख) यथास्थिति, सदन की प्रवर समिति द्वारा अथवा सदन की संयुक्त प्रवर समिति द्वारा प्रतिवेदित रूप में विधेयक उसी प्रवर समिति या एक नई प्रवर समिति या उसी संयुक्त प्रवर समिति या एक नई संयुक्त प्रवर समिति को, या तो :

1– परिसीमा के बिना; अथवा

2– केवल विशेष खण्डों या संशोधनों के सम्बन्ध में हो; अथवा

3– समिति को विधेयक में कोई विशेष या कोई अतिरिक्त उपबन्ध करने के अनुदेशों के साथ; या

(ग) यथास्थिति, सदन की प्रवर समिति अथवा सदनों की संयुक्त प्रवर समिति द्वारा प्रतिवेदित रूप में विधेयक, यथास्थिति, उस पर राय या अतिरिक्त राय जानने के प्रयोजन के लिए परिचालित या पुनः परिचालित किया जाए।

(2) यदि विधेयक भार–साधक सदस्य यह प्रस्ताव करें कि, यथास्थिति, सदन की प्रवर समिति द्वारा अथवा सदनों की संयुक्त प्रवर समिति द्वारा प्रतिवेदित रूप में विधेयक पर विचार किया जाए तो कोई सदस्य संशोधन के रूप में यह प्रस्ताव कर सकेंगे कि विधेयक समिति को पुनः सौंपा जाए या उस पर राय अतिरिक्त राय जानने के प्रयोजन के लिए परिचालित या पुनः परिचालित किया जाए।

fu;e 133&okn&fookn dh 0;kfIr& इस प्रस्ताव पर कि

प्रवर समिति द्वारा प्रतिवेदित रूप में विधेयक पर विचार किया जाए, वाद–विवाद प्रवर समिति के प्रतिवेदन के विचार तक और उस प्रतिवेदन में निर्दिष्ट विषयों तक या विधेयक के सिद्धान्त से सुसंगत किन्हीं वैकल्पिक सुझावों तक सीमित रहेगा।

¼?k½ l;qDr çoj lfefr

fu;e 134&l;qDr çoj lfefr dk fy;s çLrko&(1) यदि कोई प्रस्ताव किसी विधेयक को दोनों सदनों की एक संयुक्त प्रवर समिति को निर्दिष्ट करने के लिए स्वीकृत हो जाए, तो प्रमुख सचिव इस निवेदन के साथ परिषद् को संदेश भेजेंगे कि परिषद् उस प्रस्ताव पर अपनी सहमति प्रकट करे, और यदि उसकी सहमति हो तो संयुक्त प्रवर समिति में कार्य करने के लिए अपेक्षित संख्या में अपने सदस्यों की नियुक्ति कर दें।

(2) यदि इस तात्पर्य का सन्देश सभा में प्राप्त हो कि परिषद् सहमत नहीं है तो संयुक्त प्रवर समिति को कोई निर्देशन नहीं होगा।

fu;e 135&l;qDr çoj lfefr dk fun'kZu dk fy, ifj"kn~ }kjk çLrko&

(1) यदि परिषद् में कोई प्रस्ताव किसी विधेयक की दोनों सदनों की संयुक्त प्रवर समिति को निर्दिष्ट करने के लिए स्वीकृत हो और उसका संदेश प्रमुख सचिव को प्राप्त हो तो प्रमुख सचिव ऐसे संदेश की सूचना सदन का देंगे।

(2) परिषद् से ऐसे संदेश के प्राप्त होने के पश्चात् किसी भी समय सरकारी विधेयक की दशा में कोई मंत्री और असरकारी सदस्य के विधेयक की दशा में कोई सदस्य प्रस्ताव कर सकेंगे कि परिषद् द्वारा स्वीकार प्रस्ताव स्वीकार किया जाए।

(3) यदि सभा सहमत हो तो संयुक्त प्रवर समिति के लिए सभा के

प्रतिनिधियों की अपेक्षित संख्या का निर्वाचन नियम 261 के उपबन्धों के अनुसार करने के लिये प्रस्ताव किया जाएगा। तदन्तर परिषद् को एक संदेश भेजा दिया जाएगा जिसमें परिषद् द्वारा स्वीकृत प्रस्ताव पर सभा की सहमति तथा संयुक्त प्रवर समिति के लिए सभा द्वारा निर्वाचित सदस्यों के नामों की सूचना दी जाएगी।

(4) यदि सभा परिषद् द्वारा स्वीकृत प्रस्ताव से सहमत न हो तो परिषद् के पास असहमति की सूचना भेज दी जाएगी।

¼M-½ [k.Mk vkfn e l'kks/ku rFkk fo/k;dk ij fopkj

fu;e 136&fo/k;dk dk [k.M'k çLrqr fd;k tkuk&(1) जब यह प्रस्ताव स्वीकृत हो जाए कि विधेयक विचारार्थ लिया जाए तो विधेयक के प्रत्येक खण्ड के सम्बन्ध में यह प्रस्ताव किया हुआ समझा जाएगा कि वह खण्ड विधेयक का अंश माना जाए। इन नियमों में किसी बात के होते हुए भी अध्यक्ष के स्वविवेक में होगा कि विधेयक या विधेयक के किसी भाग को खण्ड प्रतिखण्ड सभा के समक्ष रखें। अध्यक्ष प्रत्येक खण्ड को पृथक–पृथक लेंगे और जब उसमें सम्बद्ध संशोधन का निस्तारण अनुवर्ती नियमों के उपबन्धों के अनुसार हो जाए तब यह प्रश्न उपस्थित करेंगे ''कि यह खण्ड या, यथास्थिति, यह संशोधित खण्ड, विधेयक का अंश माना जाए।''

(2) अध्यक्ष, यदि वे ठीक समझें ऐसे खण्डों के समूह को एक प्रश्न के रूप में रख सकेंगे जिन पर कोई संधोधन प्रस्तुत नहीं किये गये हों: परन्तु यदि कोई सदस्य प्रार्थना करे कि कोई खण्ड अलग से रखा जाए तो अध्यक्ष उस खण्ड को अलग से रखेंगे।

fu;e&137&fdlh [k.M dk LFkxu&अध्यक्ष, यदि ठीक समझें तो किसी खण्ड पर विचार स्थगित कर सकेंगे।

fu;e&138&vuqlwph ij fopkj&अनुसूची या अनुसूचियों पर यदि कोई हों, खण्डों पर विचार होने के बाद विचार किया जाएगा। अनुसूचियां अध्यक्ष पीठ से रखी जाएंगी और वे उस रीति से संशोधित की जा सकेंगी जैसे कि खण्ड और नयी अनुसूचियों पर विचार मूल अनुसूचियों के विचार के बाद किया जाएगा। तब यह प्रश्न रखा जाएगा ''कि यह अनुसूची या, यथास्थिति, यह संशोधित अनुसूची, विधेयक का अंश मानी जाए''।

परन्तु अध्यक्ष अनुसूची या अनुसूचियों पर, यदि कोई हो, खण्डों के निस्तीर्ण किये जाने के पहले या किसी खण्ड के साथ या अन्यथा जैसे कि वे ठीक समझें विचार किये जाने की अनुज्ञा दे सकेंगे।

fu;e 139&l'kks/ku dh lwpuk&(1) यदि विधेयक के किसी खण्ड या अनुसूची में किसी संशोधन की सूचना उस दिन से छत्तीस घण्टे पूर्व न दी गई हो जिस दिन कि विधेयक पर विचार किया जाना हो, तो कोई भी सदस्य संशोधन के प्रस्तुत किये जाने पर आपत्ति कर सकेंगे, और यदि अध्यक्ष संशोधन के प्रस्तुत किये जाने की अनुमति न दे दें, तो ऐसी आपत्ति अभिभावी होगी :

परन्तु किसी सरकारी विधेयक की अवस्था में ऐसा संशोधन, जिसकी सूचना विधेयक भार–साधक सदस्य से मिली हो, इस कारण व्यपगत नहीं होगा कि विधेयक भार–साधक सदस्य, मंत्री या सदस्य नहीं रहे हैं और ऐसा संशोधन विधेयक के नये विधेयक भार–साधक सदस्य के नाम से छापा जाएगा :

किन्तु ऐसे संधोशनों के लिये जो पूर्णतया शाब्दिक हों, या ऐसे संशोधनों पर, जो आनुषंगिक हों या उनके सम्बन्ध में हों जो स्वीकृत किये जा चुके हों, पूर्व सूचना की आवश्यकता नहीं होगी।

(2) यदि समय हो तो प्रमुख सचिव सदस्यों को, समय–समय पर, उन संशोधनों की सूचियां उपलब्ध करेंगे, जिनकी सूचनाएं प्राप्त हो चुकी हों।

नियम 140– संशोधनों की ग्राह्यता की शर्तें–किसी विधेयक के खण्डों या अनुसूचियों में संशोधनों की ग्राह्यता निम्नलिखित शर्तों के अधीन होंगी :–

(1) संशोधन विधेयक की व्याप्ति के भीतर होगा और जिस खण्ड से उसका सम्बन्ध हो उसके विषय से सुसंगत होगा।

(2) संशोधन सभा के उसी प्रश्न पर किसी पूर्व विनिश्चिय से असंगत नहीं होगा।

(3) संशोधन ऐसा नहीं होगा कि जिससे वह खण्ड जिसे संशोधित करने की उसमें प्रस्थापना हो, दुर्बोध या व्याकरण के अनुसार अशुद्ध हो जाए।

(4) यदि संशोधन में बाद के किसी संशोधन या अनुसूची की ओर निर्देश किया जाए या उसके बिना वह बोधगम्य हो तो प्रथम संशोधन का प्रस्ताव करने से पहले बाद के संशोधन या अनुसूची की सूचना दी जाएगी, जिससे कि संशोधन माला पूर्णरूप में बोधगम्य हो जए।

(5) अध्यक्ष वह क्रम निर्धारित करेंगे जिसमें संशोधन प्रस्तुत किये जायेंगे।

(6) अध्यक्ष ऐसे संशोधन की अनुज्ञा देने से इंकार कर सकेंगे जो उनकी राय में तुच्छ या अर्थहीन हों।

(7) जिस संशोधन की अध्यक्ष पहले अनुज्ञा दे चुके हों उसमें संशोधन प्रस्तुत किया जा सकेगा।

नियम 141– संशोधनों की सूचना के साथ राष्ट्रपति की मंजूरी या राज्यपाल की सिफारिश का संलग्न किया जाना–

(1) यदि शासन कोई ऐसा संशोधन प्रस्तावित करना चाहे जो

संविधान के अन्तर्गत राष्ट्रपति की पूर्व मंजूरी अथवा राज्यपाल की सिफारिश के बिना प्रस्तुत नहीं किया जा सकता हो तो वह आवश्यक सूचना के साथ ऐसी मंजूरी या सिफारिश की एक प्रति संलग्न करेगा और सूचना तब तक वैध नहीं होगी जब तक कि वह आवश्यकता पूरी न हो जाए।

(2) यदि कोई असरकारी सदस्य किसी ऐसे, संशोधन की सूचना दे जो अध्यक्ष की राय में राष्ट्रपति की पूर्व मंजूरी अथवा राज्यपाल की सिफारिश के बिना प्रस्तावित नहीं किया जा सकता हो, तो अध्यक्ष सूचना की प्राप्ति के उपरान्त यथासंभव शीघ्र उस संशोधन को राष्ट्रपति अथवा राज्यपाल को यथास्थिति, निर्दिष्ट कर देंगे।

fu;e 142& l'kks/kuk dk Øe&(1) संशोधनों पर विधेयक के खण्डों के क्रम के अनुसार जिनसे क्रमशः उनका संबंध हो, साधारणतया विचार किया जाएगा परन्तु अध्यक्ष को अभिसूचित संशोधनों के प्रवरण की शक्ति होगी।

(2) अध्यक्ष, यदि वे ठीक समझें किसी खण्ड के एक से संशोधनों को एक प्रश्न के रूप में रख सकेंगे :

परन्तु यदि कोई सदस्य प्रार्थना करे कि कोई संशोधन अलग से रखा जाए तो अध्यक्ष उस संशोधन को अलग से रखेंगे।

किन्तु समय और पुनरावृत्ति बचाने के अभिप्राय से परस्पर निर्भर संशोधनों के समूह पर केवल एक चर्चा की अनुमति दी जा सकेगी।

fu;e 143& l'kks/kuk dh okil h & प्रस्तुत किया गया कोई संशोधन प्रस्तुत करने वाले सदस्य की प्रार्थना पर सदन की अनुमति से वापस लिया जा सकेगा किन्तु अन्यथा नहीं। यदि किसी संशोधन में संशोधन प्रस्थापित किया गया हो तो मूल संशोधन तब तक वापस नहीं लिया जाएगा जब तक उसमें प्रस्थापित संशोधन निस्तीर्ण न कर दिया जाए।

fu;e 144&fo/k;d dk çFke [k.M] çLrkouk vkj 'kh"kZd&विधेयक का प्रथम खण्ड, प्रस्तावना यदि कोई हो और शीर्षक तब तक स्थगित रहेंगे जब तक कि अन्य खण्डों और अनुसूचियों(नये खण्डों और नयी अनुसूचियों सहित) का निस्तारण न हो जाए और तदुपरान्त अध्यक्ष यह प्रश्न उपस्थित करेंगे ''कि प्रथम खण्ड या प्रस्तावना या शीर्षक(अथवा यथास्थिति संशोधित प्रथम खण्ड, प्रस्तावना या शीर्षक) को विधेयक का अंश माना जाए''।

¼p½ fo/k;dk dk ikj.k rFkk çek.khdj.k

fu;e 145&fo/k;dk dk ikj.k&(1) जब यह प्रस्ताव कि विधेयक पर विचार किया जाए स्वीकार हो गया हो और विधेयक में कोई संशोधन न हुआ हो तब विधेयक के भार–साधक सदस्य तुरन्त ही यह प्रस्ताव कर सकेंगे कि विधेंयक पारित किया जाए।

(2) यदि विधेयक में कोई संशोधन किया जाए तो कोई भी सदस्य ऐसे किसी प्रस्ताव के उसी दिन किये जाने पर आपत्ति कर सकेंगे कि विधेयक को पारित किया जाए और यदि अध्यक्ष उस प्रस्ताव को प्रस्तुत करने की अनुज्ञा न दे दें तो ऐसी आपत्ति अभिभावी होगी।

(3) ऐसे प्रस्ताव पर कोई संशोधन प्रस्तुत नहीं किया जाएगा।

fu;e 146&okn&fookn dh 0;kfIr&इस प्रस्ताव पर कि विधेयक पारित किया जाए चर्चा विधेयक के समर्थन या उसकी अस्वीकृति के प्रतकों तक सीमित होगी।

fu;e 147&fo/k;dk e vkipkfjd l'kks/ku&जब कोई विधेयक सभा द्वारा पारित हो जाए तब प्रमुख सचिव खण्डों को पुनरांकित करेंगे कि उपांतिक टिप्पणियों को पुनरीक्षित एवं पूर्ण करेंगे, उनमें केवल ऐसे औपचारिक, शाब्दिक अथवा अनुषांगिक संशोधन करेंगे, जो आवश्यक हों ओर ऐसी त्रुटियों का शोधन करेंगे जो उनको असावधानता के कारण रह गयी प्रतीत हों।

fu;e 148&fo/k;dk dk ifj"kn dk igpk;k tkuk&(1) प्रमुख सचिव विधेयक की चार प्रतियां अध्यक्ष को प्रस्तुत करेंगे और अध्यक्ष और उनकी अनुपस्थिति में अविलम्बनीय अवस्था में प्रमुख सचिव, अध्यक्ष के कृते, उन्हें निम्न रूप में प्रमाणित करेंगे :–

''इस विधेयक को उत्तर प्रदेश विधान सभा ने ....20.....को पारित किया।

दिनांक..... अध्यक्ष।''

परन्तु यदि अनुच्छेद 199 के अर्थ में यह एक धन विधेयक हो तो विधेयक के अन्त में अध्यक्ष का प्रमाण–पत्र निम्न प्रकार से अंकित होगा :–

''मैं एतद्द्वारा प्रमाणित करता हूं कि यह विधेयक भारत के संविधान के अनुच्छेद 199 के अर्थ के अन्तर्गत एक धन विधेयक है।

दिनांक ..... अध्यक्ष।''

(2) उक्त प्रतियों में से तीन प्रतियां परिषद् को उसके विचारार्थ भेजी जायेंगी।

¼N½ /ku fo/k;dk d vfrfjDr vU; fo/k;dk d ifj"kn l çR;kofrr gku ij çfØ;k

fu;e 149&l'kks/ku d fcuk ikfjr fo/k;dk d ckj e ifj"kn l ln'k&यदि धन विधेयक के अतिरिक्त सभा द्वारा पारित तथा परिषद् को पहुंचाया गया कोई विधेयक परिषद् द्वारा बिना किसी संशोधन के पारित कर दिया जाए तो परिषद् से प्राप्त तत्संबंधी संदेश प्रमुख सचिव द्वारा सदन को, यदि उसका उपवेशन हो रहा हो तो तुरन्त, अन्यथा आगामी उपवेशन में प्रतिवेदित किया जाएगा।

fu;e 150&ifj"kn l fo/k;d dk çR;kor u&(1) जब धन

विधेयक के अतिरिक्त कोई विधेयक जो सभा में आरम्भ हुआ हो परिषद् द्वारा अस्वीकृत हो जाए या उस तिथि से जब विधेयक परिषद् के समक्ष रखा गया था परिषद् द्वारा बिना उसके पारित हुए तीन माह से अधिक व्यतीत हो जाए, तो प्रमुख सचिव उपर्युक्त तथ्यों की सूचना सदन को देगे और तब सभा पूर्वगामी नियमों में विधेयक के तृतीय पठन के लिये विहित प्रक्रिया के अनुसार विधेयक को पुनः पारित करने के लिए कार्यवाही करेंगी।

(2) यदि विधेयक परिषद् द्वारा संशोधन सहित पारित किया जाए तो संशोधनों सहित विधेयक यथाशीघ्र पटल पर रखा जाएगा और संशोधनों सहित विधेयक की प्रतिलिपियां सदस्यों को वितरित किये जाने के उपरान्त सरकारी विधेयक की अवस्था में कोई मंत्री अथवा किसी और अवस्था में कोई सदस्य दो दिन की सूचना के पश्चात् या अध्यक्ष की सम्मति से बिना सूचना पर भी प्रस्ताव कर सकेंगे कि परिषद् द्वारा किये गये संशोधनों पर विचार किया जाए।

fu;e 151& l'kk/kuk ij fopkj dju dh çfØ;k&

(1) यदि यह प्रस्ताव कि परिषद् द्वारा किये गये संशोधनों पर विचार किया जाए, स्वीकृत हो जाए, तो अध्यक्ष संशोधनों को इस प्रकार के समक्ष विचारार्थ रखेंगे जिसे वे सुविधाजनक समझें।

(2) इस प्रक्रम पर केवल ऐसे संशोधन प्रस्तुत किये जा सकेंगे जो परिषद् द्वारा किये गये संशोधनों के विषय से सुसंगत हों अथवा उनके आनुषांगिक या वैकल्पिक हों।

(3) यदि सदन परिषद् द्वारा किये गये संशोधनों से सहमत हों तो वह परिषद् को तत्संबंधी संदेश भेजेगा किन्तु यदि वह असहमत हो या विधेयक में कोई अग्रेतर संशोधन स्वीकार करें तो सदन, यथास्थिति, विधेयक को या अग्रेतर संशोधित विधेयक को पुनः पारित करके तत्संबंधी संदेश सहित परिषद् को लौटाएगा।

fu;e 152&l'kks/kuks dk fopkj dh çfØ;k& (1) यदि विधेयक परिषद् द्वारा सभा को पुनः इस संदेश के साथ लौटाया जाए कि परिषद् उस संशोधन या उन संशोधनों पर आग्रह करती है जिनसे सदन पहले असहमत हो चुका है तो विधेयक दोनों सदनों द्वारा उस रूप में पारित समझा जाएगा जिसमें कि यह सभा द्वारा दूसरी बार पारित हुआ था।

(2) यदि नियम 150(1) के अधीन प्रस्ताव स्वीकृत हो जाए कि विधेयक, जैसा मूलतः पारित हुआ है, पारित किया जाए, तो विधेयक पुनः परिषद् को पहुंचाया जाएगा और यदि–

(क) परिषद द्वारा विधेयक अस्वीकार कर दिया जाता है, अथवा

(ख) परिषद् के समक्ष विधेयक रखे जाने की तिथि से, उससे विधेयक पारित हुए बिना एक मास से अधिक समय व्यतीत हो जाता है, अथवा

(ग) परिषद् द्वारा विधेयक संशोधनों सहित पारित होता है, तो उप नियम (क) और (ख) की दशा में विधेयक सदनों द्वारा उस रूप में पारित समझा जाएगा जिसमें कि वह सभा द्वारा दूसरी बार पारित किया गया था। उप–नियम (2) (ग) की दशा में सभा की सहमति या असहमति नियम 151 में विहित प्रक्रिया के अनुसार प्राप्त की जाएगी।

¼t½ /ku fo/k;d

fu;e 153&/ku fo/k;dk ij ifj"kn dh flQkfj'k&यदि सभा द्वारा पारित तथा परिषद् को पहुचाया गया कोई धन विधेयक सभा को बिना सिफारिश के लौटा दिया जाए या परिषद् में उसकी प्राप्ति के दिनांक से 14 दिन की अवधि समाप्त हो जाए तो तत्सम्बन्धी सूचना प्रमुख सचिव द्वारा सदन को उपवेशन होने की दशा में तुरंत, अन्यथा सदस्यों को पत्र द्वारा दी जाएगी।

fu;e 154&ifj"kn }kjk dh x;h flQkfj'kksa ij fopkj& (1) यदि सभा द्वारा पारित तथा परिषद् को पहुंचाया गया कोई धन विधेयक परिषद् द्वारा सिफारिश किये गये संशोधनों सहित सदन को लौटाया जाए तो वह प्राप्त होने पर पटल पर रखा जाएगा।

(2) यदि विधेयक परिषद् द्वारा सिफारिशों सहित लौटाया जाए तो सिफारिशों सहित विधेयक यथाशीघ्र पटल पर रखा जाएगा और सिफारिश सहित विधेयक की प्रतिलिपियां सदस्यों को वितरित किये जाने के उपरान्त सरकारी विधेयक की अवस्था में कोई मंत्री अथवा किसी अन्य अवस्था में कोई सदस्य दो दिन की सूचना के पश्चात् या अध्यक्ष की सम्मति से बिना सूचना पर भी प्रस्ताव कर सकेंगे कि परिषद् द्वारा की गयी सिफारिशों पर विचार किया जाए।

fu;e 155&ifj"kn }kjk flQkfj'k fd;s x;s l'kks/ku ij fopkj djus dh çfØ;k&(1) यदि यह प्रस्ताव कि परिषद् द्वारा की गयी सिफारिशों पर विचार किया जाए, स्वीकृत हो जाए, तो अध्यक्ष परिषद् द्वारा की गयी ऐसी सिफारिशों को सदन के सामने ऐसी रीति से रखेंगे, जिसे वे ठीक समझें।

(2) यदि सदन परिषद् द्वारा की गयी सिफारिशों को स्वीकार कर ले तो विधेयक परिषद् द्वारा की गयी ऐसी सिफारिशों सहित जो सदन द्वारा स्वीकृत है दोनों सदनों द्वारा पारित किया गया समझा जाएगा।

fu;e 156&lnuksa ds e/; vlgefr&यदि सदन परिषद् की किसी सिफारिश को स्वीकार न करे, तो विधेयक दोनों सदनों द्वारा उस रूप में पारित समझा जाएगा जिसमें कि वह सभा द्वारा परिषद् की किसी सिफारिश के बिना पारित हुआ था।

fu;e 157&lHkk ds fofu'p;ksa dk ifj"kn dks lpkj& परिषद् की सिफारिशों पर सभा के विचार के परिणाम की सूचना देते हुए एक संदेश परिषद् को भेजा जाएगा।

¼>½ lkekU;

fu;e 158&fo/k;d d o"k dk vuefr d o"k d vu: i dju dh v/;{k dh 'kfDr&पूर्वगामी वर्ष में पुरःस्थापित किन्तु अनुवर्ती वर्ष में पारित विधेयकों की दशा में अथवा ऐसे विधेयकों की दशा में जो उसी वर्ष पारित हों किन्तु जिनके लिए अनुवर्ती वर्ष में अनुमति दिये जाने की संभावना हो, अध्यक्ष विधेयक के वर्ष को परिवर्तित कर देंगे जिससे कि वह पारण के वर्ष के अनुरूप या उस वर्ष के अनुरूप हो जाए जिसमें कि, यथास्थिति, राष्ट्रपति या राज्यपाल द्वारा अनुमति मिलने की संभावना हो।

fu;e 159&fo/k;d ij vuefr& जब सभा में पुरःस्थापित विधेयक, संविधान के उपबन्धों के अनुसार दोनों सदनों द्वारा पारित हो जाए, तब प्रमुख सचिव उसमें शाब्दिक और आनुषंगिक संशोधन, यदि कोई हो, करेंगे तथा उस पर अध्यक्ष के हस्ताक्षर और यदि वह धन विधेयक हो तो अनुच्छेद 199 (4) के अन्तर्गत आवश्यक प्रमाण भी अंकित हो जाने के उपरान्त वह विधेयक तीन प्रतियों में राज्यपाल की अनुमति के लिए प्रस्तुत किया जाएगा।

fu;e 160&'kkfCnd l'kks/kuk dk fooj.k&नियम 159 के अधीन हस्ताक्षरित प्रति के साथ राज्यपाल को एक विवरण भी प्रस्तुत किया जाएगा जिसमें विधेयक में किये गये ऐसे शाब्दिक और आनुषंगिक संशोधन या त्रुटियों का शोधन दर्शाया जाएगा जो नियम 147 और 159 के अन्तर्गत किये गये हैं। विधेयक में किये गये इन परिवर्तनों की प्रतिलिपि राज्यपाल की अनुमति की घोषणा से पूर्व प्रमुख सचिव द्वारा पटल पर रखी जाएगी।

¼´½ ifj"kn e ijLFkkfir fo/k;dk d lEcU?k e çfØ;k

fu;e 161&fo/k;d ftudk ifj"kn u ikfjr fd;k g&जब कोई विधेयक परिषद् में पुरःस्थापित तथा पारित हुआ हो और सभा में

प्राप्त हो तो विधेयक प्रमुख सचिव द्वारा यथाशीघ्र पटल पर रखा जाएगा।

fu;e 162&fopkj dju dh fy, çLrko dh lpuk&नियम 161 के अन्तर्गत विधेयक के पटल पर रखने जाने तथा उसकी प्रतिलिपियां सदस्यों को वितरित किये जाने के उपरान्त किसी सरकारी विधेयक की दशा में कोई मंत्री या किसी अन्य दशा में कोई सदस्य इस प्रस्ताव की सूचना दे सकेंगे कि विधेयक विचारार्थ लिया जाए।

fu;e 163&fopkj dju dh fy, çLrko&जब तक कि अध्यक्ष अन्यथा निदेश न दें, नियम 162 में उल्लिखित प्रस्ताव सूचना प्राप्त होने के दिनांक से दो दिन के उपरान्त किसी दिन कार्य–सूची में सम्मिलित एवं सदन में प्रस्तुत किया जा सकेगा।

fu;e 164&ppk& उस दिन जब ऐसा प्रस्ताव किया जाय या किसी अनुवर्ती दिन जिसके लिए चर्चा स्थगित की जाए विधेयक के सिद्धान्त और उसके सामान्य उपबन्धों पर चर्चा हो सकेगी, किन्तु विधेयक के सविस्तार विवरणों पर उससे अधिक चर्चा नहीं होगी जितनी कि उसके सिद्धान्तों की व्याख्या के लिए आवश्यक हो।

fu;e 165&çoj lfefr dk fun'ku&कोई भी सदस्य (यदि विधेयक पहले ही संयुक्त प्रवर समिति को निर्दिष्ट न कर दिया गया हो) संशोधन के रूप में यह प्रस्ताव कर सकेंगे कि विधेयक एक प्रवर समिति को निर्दिष्ट कर दिया जाए और यदि ऐसा प्रस्ताव स्वीकृत हो जाय तो विधेयक तद्नुसार निर्दिष्ट कर दिया जाएगा और तब सभा में प्रारम्भ होने वाली विधेयकों की प्रवर समिति से सम्बद्ध नियम प्रवृत्त होंगे।

fu;e 166&fo/k;dk ij fopkj ,oa mudk ikj.k&यदि प्रस्ताव, कि विधेयक पर विचार किया जाए, स्वीकृत हो जाए, तो विधेयक विचारार्थ ले लिया जायेगा और तब विधेयकों के संशोधनों पर विचार से सम्बद्ध नियमों के उपबन्धों तथा विधेयकों के पारण से सम्बद्ध अनुवर्ती प्रक्रिया लागू होगी।

fu;e 167&l'kks/ku jfgr ikfjr fo/k;d&यदि विधेयक संशोधन के बिना पारित हो जाए तो विधेयक एतद्विषयक संदेश के साथ परिषद् को भेजा जायेगा कि सभा विधेयक से बिना किसी संशोधन के सहमत है।

fu;e 168&l'kks/kuk lfgr ikfjr fo/k;d&(1) यदि विधेयक संशोधनों सहित पारित हो जाए तो विधेयक इस संदेश के साथ लौटाया जायेगा कि परिषद् संशोधन को स्वीकार कर लें।

(क) यदि परिषद् सभा द्वारा किये गये संशोधनों या उनमें से किसी संशोधन से असहमत हो या सभा द्वारा किये गये संशोधनों में से किसी संशोधन को अग्रेतर संशोधनों के साथ स्वीकार करे या सभा द्वारा किये गये संशोधनों के स्थान में अन्य संशोधन प्रस्थापित करें, तो यथास्थिति, असहमति की सूचना या संशोधन, यदि कोई हो, प्रमुख सचिव द्वारा प्राप्त होने पर विधेयक के साथ पटल पर रखे जायेंगे।

(ख) विधेयक के इस प्रकार पटल पर रखे जाने पर तथा संशोधनों या असहमति की सूचना सहित उसकी प्रतिलिपियाँ सदस्यों को वितरित किये जाने के उपरान्त सरकारी विधेयक की अवस्था में कोई मंत्री अथवा किसी अन्य अवस्था में कोई सदस्य दो दिन की सूचना के पश्चात् या अध्यक्ष की सम्मति से बिना सूचना के प्रस्ताव कर सकेंगे कि उस पर परिषद् द्वारा सुझाव या स्वीकार किये गये संशोधनों सहित या बिना, विचार किया जाये।

(ग) तदुपरान्त नियम 151 में संशोधनों पर विचार के लिए विहित प्रक्रिया लागू होगी।

(घ) इस प्रकार के विचार उपरान्त विधेयक इस सन्देश के साथ लौटाया जायेगा कि सभा विधेयक को ऐसे संशोधनों सहित या ऐसे संशोधनों के बिना, यदि कोई हों, जो किये गये हों, या जिनका सुझाव दिया गया हो, या जिनसे परिषद् सहमत हो, पारित करती है, अथवा यह

मूलतः प्रस्थापित संशोधनों पर आग्रह करती है। ऐसी अवस्था में परिषद् सभा द्वारा पारित विधेयक पर विचार कर सकेगी, किन्तु यदि परिषद् सभा द्वारा पारित विधेयक से फिर भी असहमत हो तो विधेयक दोनों सदनों द्वारा पारित हुआ समझा जायेगा।

(2) परिषद् को इस तरह लौटाया गया विधेयक अध्यक्ष द्वारा निम्न प्रकार से प्रमाणित किया जायेगाः

''यह विधेयक...20.............................
.............को सभा द्वारा संशोधित रूप में पारित किया गया है।

दिनांक.........................20..........................अध्यक्ष।''

¼V½ lfo/kku d vuPNn 200 vkj 201 d vUrxr ykVk; x; fo/k;dk ij iufopkj

fu;e 169&jkT;iky dk lUn'k&(1) जब सभा द्वारा पारित कोई विधेयक सभा को राज्यपाल द्वारा एक सन्देश के साथ लौटाया जाए जिसमें यह कहा गया हो कि सभा विधेयक पर अथवा उसके किन्हीं उल्लिखित उपबन्धों पर अथवा किन्ही संशोधनों पर जिनकी सन्देश में सिफारिश की गयी हो, पुनर्विचार करें तो अध्यक्ष राज्यपाल के सन्देश को सभा में, यदि वह सत्र में हो, पढ़कर सुनायेंगे अथवा यदि सभा सत्र में न हों तो यह निदेश देंगे कि उसकी सूचना सदस्यों को पत्र द्वारा दी जाए।

(2) उसके पश्चात् विधेयक को सभा द्वारा पारित और राज्यपाल द्वारा पुनर्विचार के लिए लौटाये गये रूप में प्रमुख सचिव द्वारा पटल पर रखा जायेगा।

169&d&l'kk/kuk ij fopkj d çLrko dh lpuk& विधेयक के इस प्रकार पटल पर रखे जाने के पश्चात् किसी सरकारी विधेयक की दशा में कोई मंत्री या किसी अन्य दशा में कोई सदस्य यह

प्रस्ताव रखने के अभिप्राय की सूचना दे सकेंगे कि सन्देश में दिये निदेशों के परिप्रेक्ष्य में विधेयक पर पुनर्विचार किया जाए।

169&[k&iqufoZpkj djus dk çLrko&पुनर्विचार का प्रस्ताव कार्य–सूची में जिस दिन रखा गया हो और वह दिन जब तक अध्यक्ष अन्यथा निदेश न दें सूचना प्राप्ति के दो दिन से पहले नहीं होगा, उस दिन सूचना देने वाले सदस्य यह प्रस्ताव कर सकेंगे कि सन्देश में दिये गये निदेशों के या संशोधनों के परिप्रेक्ष्य में विधेयक पर पुनर्विचार किया जाए।

169&x&okn&fookn dh 0;kfIr& ऐसे प्रस्ताव पर वाद–विवाद राज्यपाल के सन्देश में निर्दिष्ट विषयों तक या राज्यपाल द्वारा सिफारिश किये गये किसी संशोधन के विषय में संगत किसी सुझाव तक ही सीमित रहेगा।

169&?k&la'kks/kuksa ij fopkj&(1) यदि यह प्रस्ताव कि सन्देश में दिये गये निदेशों या संशोधनों के परिप्रेक्ष्य में विधेयक पर पुनर्विचार किया जाए, पारित हो जाए तो कोई सदस्य अध्यक्ष द्वारा पुकारे जाने पर विधेयक में संशोधन प्रस्तुत कर सकेगा जिसकी उसने पहले से सूचना दी हो।

(2) जब राज्यपाल द्वारा विशेष संशोधनों की सिफारिश की जाए तो राज्यपाल द्वारा सिफारिश किये गये संशोधनों के विषय से सुसंगत संशोधन प्रस्तुत किये जा सकते हैं, किन्तु विधेयक में कोई अन्य संशोधन नहीं किये जा सकते जब तक कि वे राज्यपाल द्वारा सिफारिश किये गये संशोधन के अनुषंगित, प्रासंगिक या वैकल्पिक संशोधन न हों।

(3) यदि राज्यपाल द्वारा किसी विशेष संशोधन की सिफारिश न की जाए तो किसी ऐसे संशोधन को प्रस्तुत नहीं किया जा सकेगा जो विधेयक के पुनर्विचार की सिफारिश करने वाले सन्देश की व्याप्ति में न हो।

(4) राज्यपाल द्वारा सिफारिश किये गये संशोधनों, यदि कोई हों, और ऐसे अन्य संशोधनों, जो पुनर्विचार किये जाने के लिए राज्यपाल के सन्देश की व्याप्ति में हों, पर अध्यक्ष द्वारा प्रश्न उपस्थित किया जायेगा।

169&M-&fo/k;dk dk iqu% ikj.k& जब सभी संशोधन निपटाये जा चुके हों, तो नियम 169–क के अधीन प्रस्ताव की सूचना देने वाले सदस्य यह प्रस्ताव कर सकेंगे कि विधेयक को, यथास्थिति, सभा द्वारा मूलतः पारित रूप में अथवा संशोधित रूप में पुनः पारित किया जाए।

169&p&lUns'k ls lHkk dh vlgefr& यदि यह प्रस्ताव पारित न हो कि सन्देश में अन्तर्निहित निदेशों के प्रकाश में राज्यपाल द्वारा लौटाये गये विधेयक पर पुनर्विचार किया जाए तो नियम 169–क के अधीन प्रस्ताव की सूचना देने वाले सदस्य तत्काल यह प्रस्ताव कर सकेंगे कि सभा द्वारा मूलरूप में पारित विधेयक को पुनः किसी संशोधन के बिना पारित किया जाए।

169&N&lfo/kku ds vuqPNsn 201 ds ijUrqd ds vUrxZr lUns'k lfgr ykSVk;s x;s fo/ks;dksa ij iqufoZpkj & जब कोई विधेयक जो सभा द्वारा पारित हो चुका हो, सभा को संविधान के अनुच्छेद 201 के परन्तुक के उपबन्धों के अनुसार पुनर्विचार करने के सन्देश सहित लौटाया जाए तो उसके सम्बन्ध में उस प्रक्रिया का अनुसरण किया जायेगा, जो सभा द्वारा पारित उन विधेयकों के सम्बन्ध में अनुसरित की जाती है जो संविधान के अनुच्छेद 200 के परन्तुक के अन्तर्गत पुनर्विचार के लिए लौटाये जाते हैं और उपर्युक्त नियमों के उपबन्धों एवं अनुकूलनों के अधीन रहते हुए प्रवृत्त होंगे, जो रूपभेद, परिवर्धन या लोप के रूप में हो सकते हैं, जिन्हें अध्यक्ष आवश्यक या इष्टकर समझें।

¼V V½ lHkk }kjk iqu% fo/ks;d dk çek.khdj.k

169&t&lHkk }kjk iqu% ikfjr fo/ks;d dk çek.khdj.k&

जब कोई विधेयक सभा द्वारा पुनः पारित किया जाए तथा वह सभा के कब्जे में हो तब विधेयक पर अध्यक्ष द्वारा हस्ताक्षर किये जायेंगे और उसे राज्यपाल के समक्ष निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत किया जायेगाः–

''उक्त विधेयक संविधान के अनुच्छेद 200 के प्रथम परन्तुक/201 के परन्तुक के अनुसरण में सभा द्वारा बिना संशोधन के मूलरूप से/निम्नलिखित संशोधनों सहित पुनः पारित किया गया है।''

¼B½ fo/k;dk dk LFkxu vkj okilh rFkk vikLr foèk;d

fu;e 170&fo/k;d ij okn&fookn dk LFkxu&सदन में चर्चाधीन विधेयक के किसी प्रक्रम पर अध्यक्ष की सम्मति से यह प्रस्ताव किया जा सकेगा कि विधेयक पर वाद–विवाद स्थगित किया जाये।

fu;e 171&fo/k;d dh okilh&विधेयक के भार–साधक सदस्य विधेयक के किसी प्रक्रम पर विधेयक को इस आधार पर वापस लेने की अनुमति का प्रस्ताव कर सकेंगे किः–

(क) विधेयक में अन्तर्विष्ट विधायिनी प्रस्थापना समाप्त की जानी है, या

(ख) बाद में उस विधेयक के स्थान में एक नया विधेयक लाया जाना है जिससे उसमें अन्तर्विष्ट उपबन्धों में सारतः रूपान्तर हो जायेगा, या

(ग) बाद में उस विधेयक के स्थान पर एक नया विधेयक लाया जाना है जिसमें अन्य उपबन्धों के अतिरिक्त उसके सभी या कुछ उपबन्ध सम्मिलित होंगे,

और यदि ऐसी अनुमति दी जाय तो विधेयक के संबंध में अग्रेतर प्रस्ताव नहीं किया जायेगा और वह स्वतः वापस किया हुआ समझा जायेगाः

परन्तु जब कोई विधेयक परिषद् में आरम्भ हुआ हो और सदन के समक्ष लम्बित हो तो विधेयक भार–साधक सदस्य सदन में यह प्रस्ताव करेंगे कि यदि परिषद् विधेयक को सदन द्वारा वापस किये जाने की अनुमति से सहमत हो तो विधेयक को वापस लेने की अनुमति दी जाए और यदि सदन इस प्रस्ताव की अंगीकार कर ले और परिषद् इस प्रस्ताव को अंगीकार कर ले और परिषद् इस प्रस्ताव से सहमत हो जाये तो उसकी सूचना प्रमुख सचिव द्वारा सदन को दी जयेगी और यह समझा जायेगा कि विधेयक वापस किया गया।

fu;e 172 & fo/k;d dh okilh dk çLrko ;k mldk fojk/k djus okys lnL; }kjk O;k[;kRed oDrO; & यदि किसी विधेयक को वापस लेने की अनुज्ञा के प्रस्ताव का विरोध किया जाए तो अध्यक्ष, यदि वे समझें, प्रस्ताव प्रस्तुत करने वाले सदस्य को तथा प्रस्ताव का विरोध करने वाले सदस्य को संक्षिप्त व्याख्यात्मक वक्तव्य देने की अनुज्ञा दे सकेंगे और उसके बाद और अधिक वाद–विवाद के बिना, प्रश्न रख सकेंगे।

fu;e 173&fo/k;dk dh ith l fdlh fo/k;d dk gVkuk&(1) जब सदन विधेयक भार साधक सदस्य द्वारा किये गये निम्नलिखित प्रस्तावों में से किसी प्रस्ताव को अस्वीकार कर दे तो उस विधेयक के संबंध में कोई अन्य प्रस्ताव नहीं किया जायेगा, और ऐसा विधेयक उस सत्र के लिये सदन में लम्बित विधेयकों की पंजी में से निकाल दिया जायेगा।

(1) कि विधेयक को पुरःस्थापित करने की अनुज्ञा दी जाए,

(2) कि विधेयक एक प्रवर समिति या संयुक्त प्रवर समिति को सौंपा जाए या उस पर राय जानने के प्रयोजन से उसे परिचालित किया जाए,

(3) कि विधेयक पर विचार किया जाए,

(4) कि प्रवर समिति या संयुक्त प्रवर समिति द्वारा प्रतिवेदित रूप में विधेयक पर विचार किया जाए, और

(5) कि विधेयक (या यथस्थिति, संशोधित रूप में विधेयक) पारित किया जाए।

(2) सदन के सामने लम्बित विधेयक सदन द्वारा सारतः समान विधेयक पारित हो चुकने की या नियम 171 के अधीन विधेयक के वापस हो जाने की अवस्था में सदन में लम्बित विधेयकों को पंजी में से निकाल दिया जायेगा।

0;k[;k& सदन के सामने लम्बित विधेयक में ये सम्मिलित होंगे–

(1) सदन में पुरःस्थापित विधेयक जो इस नियम या नियम 174 में उल्लिखित विधेयकोंके वर्गों के अन्दर नहीं आता,

(2) यथास्थिति, परिषद् को पहुँचाया गया तथा परिषद् द्वारा संशोधन, या सिफारिश सहित लौटाया गया, और नियम 154 के अन्तर्गत पटल पर रखा गया विधेयक,

(3) परिषद् में आरम्भ और सदन को पहुँचाया गया और नियम 161 या 168 (1) (क) के अन्तर्गत पटल पर रखा गया विधेयक, तथा

(4) यथास्थिति, संविधान के अनुच्छेद 200 या 201 के अन्तर्गत राज्यपाल के या राष्ट्रपति के संदेश के साथ लौटाया गया विधेयक।

fu;e 174&fo/k;dk dh iath ls vljdkjh lnL; dk fo/k;d gVkus ds fy, fo'ks"k micU/k& सदन के सामने लम्बित किसी असरकारी सदस्य का विधेयक सदन में लम्बित विधेयकों की पंजी में से हटा दिया जायेगा, यदि–

(क) विधेयक भार–साधक सदस्य सदन के सदस्य न रहें;

(ख) विधेयक भार–साधक सदस्य मंत्री नियुक्त किये जाएं।

fu;e 175&vikLr fo/k;d&विधेयक, जिसके संबंध में दो वर्ष तक सभा में कोई प्रस्ताव प्रस्तुत न हुआ हो अपास्त समझा जायेगा और अध्यक्ष के आदेश से विधेयकों की पंजी में से हटा दिया जायेगा।

¼M½ lnu d lkeu j[k x;s lfofgr fofu;e] fu;e vkfn

fu;e 176&fofu;e] fu;e vkfn dk lnu d iVy ij j[kk tkuk& (1) जब संविधान, संसद या विधान मण्डल द्वारा किसी प्राधिकारी को प्रत्यायोजित विधायी कृत्यों के अनुसरण में बनाये गये विनियम, नियम, उप–नियम, उप–विधि आदि सदन के सामने रखे जाएं तो तत्संगत विधि में उल्लिखित कालावधि जिसके लिये उसके रखे जाने की अपेक्षा हो सभा के सत्रावसान होने के पहले पूरी की जायेगी जब तक कि तत्संगत विधि में अन्यथा उपबन्धित न हो।

(2) जब उल्लिखित कालावधि इस तरह पूरी न हो तो विनियम, नियम, उप–नियम, उप–विधि आदि अनुवर्ती सत्र या सत्रों में पुनः रखे जायेंगे जब तक कि कथित कालावधि एक सत्र में पूरी न हो जाए।

fu;e 177&la'kks/ku ij ppk d fy;s le; dk fu;ru& (1) पटल पर रखे गये विनियम, नियम, उप–नियम, उप–विधि आदि के संबंध में सदस्यों द्वारा संशोधन उस अवधि के भीतर प्रस्तुत किये जा सकेंगे जो अधिनियम में उनके पटल पर रखे जाने के लिये विहित हों तथा इन संशोधनों पर विचार व विनिश्चय के लिये ये नियम यथोचित परिवर्तनों सहित लागू होंगे जो विधेयक के खण्डों के संशोधनों के लिये विहित हैं।

(2) अध्यक्ष, सदन नेता के परामर्श से इन संशोधनों पर विचार तथा विनिश्चय करने के लिये तिथि निश्चित करेंगे।

fu;e 178&la'kks/ku dk ifj"kn dk igpku&संशोधन

सभा द्वारा पारित किये जाने के बाद परिषद् को उसकी सहमति के लिये पहुँचाया जायेगा और परिषद् से संशोधन की स्वीकृति का संदेश प्राप्त होने पर प्रमुख सचिव द्वारा शासन को भेजा जायेगा किन्तु यदि तत्संगत अधिनियम के अधीन परिषद् की सहमति अपेक्षित न हो तो प्रमुख सचिव सभा द्वारा पारित संशोधनों की सूचना तुरन्त शासन को भेज देंगे।

fu;e 179&ifj"kn }kjk ykSVk;k x;k l'kk/ku&यदि परिषद् सदन द्वारा पारित संशोधन से असहमत हो या उसे उसके अग्रेतर संशोधन के अधीन स्वीकार करे या उसके स्थान में अन्य संशोधन में परिषद् से सहमत हो सकेगा या सदन द्वारा पारित मूल संशोधन पर आग्रह कर सकेगा। प्रत्येक दशा में परिषद् को संदेश भेजा जायेगा। यदि सदन परिषद् द्वारा अग्रेतर संशोधित संशोधन या परिषद् द्वारा प्रस्थापित अन्य संशोधन से सहमत हो तो संशोधन जिससे सदन इस प्रकार सहमत हो प्रमुख सचिव द्वारा शासन को भेजा जायेगा।

fu;e 180&lnuk d chp vlgefr&यदि परिषद् सदन द्वारा पारित मूल संशोधन से सहमत हो जाये तो वह प्रमुख सचिव द्वारा शासन को भेजा जायेगा, किन्तु यदि परिषद् असहमत हो तो या ऐसे संशोधन पर आग्रह करे जिससे सदन सहमत न हुआ हो तो यह समझा जायेगा कि सदन अन्तिम रूप से सहमत हो गये हैं और उस पर सब अग्रेतर कार्यवाही अपास्त कर दी जायेगी।

fu;e 181&lnu dk lpuk& प्रत्येक दशा में संशोधन के संबंध में परिषद् की सहमति या असहमति की सूचना प्रमुख सचिव द्वारा सदन को दी जायेगी।

¼<½ lfo/kku e l'kk/kuk dh vuleFku dh çfØ;k

fu;e 182 lfo/kku e l'kk/ku dk vuleFku&

(1) संविधान में संशोधन के अनुसमर्थन के संचार या संदेश की

प्राप्ति होने पर उसको विधेयक एवं तद्विषयक वाद–विवाद की प्रतिलिपि सहित प्रमुख सचिव द्वारा सदन के पटल पर रखा जायेगा।

(2) अध्यक्ष सदन–नेता के परामर्श से संविधान में संशोधन के अनुसमर्थन के संकल्प पर चर्चा के लिए दिन नियत करेंगे।

(3) संकल्पों से संबंधित नियम एवं आदेश उक्त चर्चा पर यथोचित परिवर्तनों सहित प्रयुक्त होंगे।

(4) सभा द्वारा पारित हो जाने पर संकल्प की प्रतिलिपि प्रमुख सचिव द्वारा शासन तथा संसद को भेजी जायेगी। संकल्प के पारित न होने की दशा में तद्विषयक सूचना भेज दी जायेगी।

mRrj izn'k fo/kku lHkk d egRoi.k fo/kk;u

इंडियन कौंसिल एक्ट के अधीन गर्वनर जनरल को पश्चिमोत्तर प्रान्त (अब उत्तर प्रदेश) और पंजाब के लिये कौंसिल बनाने, नये प्रान्त कायम करने तथा उनके लिए ले. गर्वनर नियुक्त करने की शक्ति प्रदान की गयी। पश्चिमोत्तर प्रान्त के लिए इस प्रकार नियुक्त कौंसिल में 9 सदस्य थे, जिनमें से 3 गैर–सरकारी सदस्य थे। कौंसिल ऐसे विधायी प्रस्तावों पर विचार पर सकती थी जो सरकार उसके समक्ष रखती थी और समस्त अधिनियमों पर गर्वनर के अतिरिक्त गवर्नर जनरल की स्वीकृति अपेक्षित थी।

पश्चिमोत्तर प्रान्त तथा अवध की लेजिस्लेटिव कौंसिल की पहली बैठक दि. 8 जनवरी, 1887 को थार्नहिल मेमोरियल हाल, इलाहाबाद में हुई जिसकी अध्यक्षता लेफ्टिीनेंट गवर्नर ने की। पहला अधिनियम जिसे कौंसिल ने शनिवार दि. 19 फरवरी, 1887 को हुई अपनी बैठक में पारित किया था वह 1887 का एक्ट संख्या 1, नार्थ वेस्टर्न प्राविन्सेज ऐंड अवध जनरल क्लाजेज एक्ट था। अन्य महत्वपूर्ण अधिनियम थे 1889 का एक्ट सं. 9 जिसमें पटवारियों के वेतन के लिये जमींदारी से योगदान करने की अपेक्षा की गयी थी, 1890 का एक्ट सं. 20 जो प्रान्त के प्रशासन की प्रादेशिक सीमाओं के पुनर्गठन से संबंधित था तथा 1891 का ऐक्ट संख्या 1 जो नगरपालिका के जलकल से संबंधित था।

1893 l 1909 तक की अवधि में कौंसिल द्वारा पारित जो महत्वपूर्ण अधिनियम बने थे वे गाँव की स्वच्छता, नगरपालिकाओं, ग्राम न्यायालयों की स्थापना, अवैतनिक मुंसिफों, कोर्ट आफ वार्ड्स, काश्तकारी (टेनेन्सी), भूमि राजस्व, ऋणग्रस्त सम्पत्ति (इनकम्बर्ड

इस्टेट्स) तथा जिला बोर्डों के लिये अपेक्षाकृत अच्छी व्यवस्था किये जाने से संबंधित थे।

1910 I 1919 तक के दशक में विधान परिषद् में जो प्रमुख अधिनियम पारित किये गये वे आबकारी, अपमिश्रण निवारण, सिविल न्यायालयों, स्थानीय निकायों, सहकारी समितियों, प्राथमिक शिक्षा, भू–राजस्व और काश्तकारी से सम्बन्धित थे।

1924&27 की अवधि में परिषद् द्वारा पारित अधिनियमों में अवध कोर्ट्स ऐक्ट, यू.पी. बोर्ड आफ रेवेनयू ऐक्ट और ओपियम स्मोकिंग ऐक्ट, 1925 प्रमुख थे।

1927&30 की अवधि में परिषद् ने यू० पी० लैन्ड रेवेन्यू (सेटिलमेंट) ऐक्ट, 1929 नायक गर्ल्स प्रोटेक्शन एक्ट, 1929 तथा माइनर गर्ल्स प्रोटेक्शन ऐक्ट, 1929 नामक महत्वपूर्ण अधिनियम पारित किये।

1930&36 के दौरान यू० पी० स्पेशल पावर्स एक्ट, 1932, यू.पी. से–प्रेशन आफ इम्मारेल ट्रैफिक ऐक्ट, 1933 तथा यू० पी० एग्रीकल्चरिस्ट्स रिलीफ ऐक्ट, 1934 नामक कुछ प्रमुख अधिनियम पारित किये गये।

वर्ष **1937 I 1939** के दौरान विधान मण्डल द्वारा जो अधिनियम पारित किये गये उनमे से यू० पी० मिनिस्टर्स सेलरीज एक्ट, 1937, यू० पी० लेजिस्लेचर (आफिसर्स सेलरीज) ऐक्ट, 1937, यू० पी० लेजिस्लेटिव चैम्बर्स (मेम्बर्स इमालुमेन्ट्स) एक्ट, 1938, यू. पी, मैटर्निटी बेनिफिट ऐक्ट, 1938 तथा यू० पी० एग्रीकल्चरिस्ट्स रिलीफ ऐक्ट, 1937 महत्वपूर्ण हैं।

वर्ष **1949** में दो युगप्रवर्तक विधेयक यू० पी० जमींदारी विनाश और भूमि व्यवस्था विधेयक तथा यू.पी काश्तकार (विशेषाधिकार उपार्जन) विधेयक प्रस्तुत किये गये। इनमें से दूसरा विधेयक दिसम्बर, 1949 में और पहला विधेयक 1951 में अधिनियमित किया गया।

mÙkj çn'k tehnkjh fouk'k ,o Hkfe 0;oLFkk vf/kfu;e] 1951

8 अगस्त, 1946 ई. को संयुक्त प्रान्तीय, व्यवस्थापिका सभा (United Provinces Legislative Assembly) ने जमींदारी प्रथा को, जिसके अनुसार राज्य और कृषक के बीच मध्यवर्तियों की स्थिति है, हटाने के सिद्धान्त की स्वीकृत किया और यह प्रस्ताव पास किया कि ऐसे मध्यवतिर्यों के अधिकार उचित प्रतिकर देकर हस्तगत कर लिये जाएं। व्यवस्थापिका सभा के प्रस्ताव के अनुसार जमींदारी–उन्मूलन समिति नियुक्ति की गई थी जिसने इस जटिल प्रश्न के विविध पहलुओं पर अच्छी तरह विचार करके अपनी रिपोर्ट दी जिसमें जमींदारी के विनाश और उसके स्थान पर हमारे देश की प्रतिभा और परम्परा के अनुकूल भूमि व्यवस्था की विस्तृत योजना दी गई है। इस विषय में जनता ने बड़ी उत्सुकता प्रकट की और समाचार–पत्रों और सार्वजनिक सभाओं में इसके सामान्य प्रश्नों पर बहुत वाद–विवाद हुआ। समिति की रिपोर्ट प्रकाशित होने पर उसकी सिफारिशों की भी खूब चर्चा हुई। अब यह बहुमत से स्वीकृत किया जाता है कि कृषि सम्बन्धी निपुणता और खाद्य–उत्पादन में वृद्धि को सुरक्षित रखने, ग्राम–वासियों के जीवन स्तर को उन्नत करने और कृषक के व्यक्तित्व के पूर्ण विकास के निमित अवसर देने के लिये वर्तमान भूमि व्यवस्था में मौलिक परिवर्तन किये बिना ग्राम्य समाज के पुनरुत्थान की कोई संगठित योजना नहीं बनाई जा सकती है। शासन की सुविधा और उपयोगिता के कारणों से अंग्रेजों द्वारा स्थगित जमींदार–काश्तकार की प्रथा राजनैतिक स्वतंत्रता के आविर्भाव के साथ एक नयी परिपाटी में परिवर्तित हो जानी चाहिये जिससे कृषकों को वे अधिकार और स्वतंत्रता फिर से प्राप्त हो जाएं जो उनके थे और गाँव–समाज को वह प्रभुता, जिसका उपयोग वह ग्राम्य जीवन के प्रत्येक अंग के सम्बन्ध में करता था।

बिल में यह व्यवस्था की गई है कि मध्यवर्तियों को उनकी पक्की निकासी का अठगुना प्रतिकर देकर उनके अधिकार हस्तगत कर लिये जाएं। इससे बड़े जमींदारों को इतनी आय हो जाएगी जो उनके उपयुक्त रहन सहन के लिये पर्याप्त हो। अधिकतर जमींदार छोटी श्रेणी के हैं और उनके पुनर्वासन के लिए उनकी पक्की निकासी के दो गुना से बीस गुना तक क्रमबद्ध पुनर्वासन अनुदान की भी व्यवस्था की गई है जो कम आय वालों के लिये सबसे अधिक और अपेक्षाकृत बड़ी आय वालों के लिए सबसे कम होगा। आर्थिक और विधिक कठिनाइयों को दूर करने के लिए काश्तकारों से यह कहा जाएगा कि वे अपने लगान का दस गुना स्वेच्छा से दे दें। इससे जमींदारी का शीघ्र विनाश हो सकेगा, मुद्रास्फीति रोकी जा सकेगी और कृषकों की बचत उत्पादनशील प्रयोजन में लगाई जा सकेगी। जो काश्तकार इस प्रकार धन देंगे उनको अपने खातों में अन्तरण योग्य अधिकार मिल जायेंगे, वे भूमिधर कहलायेंगे और अपने वर्तमान लगान का 50 प्रतिशत मालगुजारी के रूप में देंगे।

यह आवश्यक समझा गया है कि वर्तमान खातेदारी अधिकारों के भ्रामक भेदों के स्थान पर एक सरल और समान योजना रखी जाए। इसलिये यह व्यवस्था कीं गई है कि भविष्य में केवल दो प्रकार की खातेदारी होगी। यह आशा की जाती है कि अधिकतर कृषक भूमिधर हो जायेंगे। वर्तमान मध्यवर्ती अपनी सीर खुदकाश्त और भागों के संबंध में भूमिधर के वर्ग में रखे जायेंगे और इसी प्रकार वे काश्तकार भी जो अपने लगान का 10 गुना दे दें। शेष काश्तकार सीरदार कहलायेंगे और उनकी भूमि में स्थायी और वंशानुगामी अधिकार मिलेंगे, वे कृषि, फलोत्पादन या पशुपालन से सम्बन्धित किसी प्रयोजन के लिए अपनी भूमि का उपयोग कर सकेंगे और कोई भी उन्नति–कार्य कर सकेंगे।

खातेदारों को एक छोटा रूप आसामी कहलायेगा, जो बहुत थोड़े व्यक्तियों को लागू होगा। इसके अन्तर्गत ऐसी भूमि के गैर दखीलकार काश्तकार होंगे जिसमें स्थायी अधिकार नहीं दिये जा सकते हैं अर्थात्

अस्थिर और अस्थायी खेती के क्षेत्र और ऐसे व्यक्ति जिनकी भविष्य में ऐसे भूमिधर और सीरदार अपनी भूमि लगान पर उठा दें जो स्वयं खेती करने में असमर्थ हों। जमींदारी प्रथा फिर से न उठ खड़ी हो इसको रोकने के लिये यह आवश्यक जान पड़ता है कि केवल ऐसे भूमिधरों और सीरदारों को अपनी भूमि लगान पर उठाने का अधिकार दिया जाए जो असमर्थ हों, अर्थात् अवयस्क, विधवायें और ऐसे व्यक्ति जो किसी शारीरिक या मानसिक निर्बलता से ग्रस्त हों।

ऐसे बहुसंख्यक कृषकों के स्वत्वों की रक्षा करना भी वांछनीय है, जिनको इस समय भूमि में कोई स्थायी अधिकार प्राप्त नहीं हैं, किन्तु जिनकी भूमि के छूट जाने पर सामाजिक अन्याय और गम्भीर आर्थिक कठिनाइयां उत्पन्न हो जाएंगी। साधारणतया सीर के सभी काश्तकारों के, जिन्हें वंशानुगामी अधिकार प्राप्त नहीं होते हैं तथा वर्तमान शिकमी काश्तकारों के, पांच वर्ष के लिये काश्तकारी अधिकार सुरक्षित रखे जायेंगे और उसके बाद वे मौरूसी दरों का या असली काश्तकारों के लगान का 15 गुना देकर भूमिधरी अधिकार प्राप्त कर सकते हैं।

अलाभकर खातों की वृद्धि रोकने के लिए यूनाइटेड प्राविंसेज टेनेंसी ऐक्ट, 1939 ई. में दिये गये परिमित उत्तराधिकारों की तालिका कुछ परिवर्तनों के साथ उसी रूप में रख ली गई है और भविष्य में खातों के ऐसे बंटवारे का निषेध कर दिया गया है जिससे अलाभकर खाते उत्पन्न हों। इस अभिप्राय से कि बड़े–बड़े खाते अत्यधिक संख्या में न हो जाएं और उसके फलस्वरूप श्रमिकों का शोषण न हों, भविष्य में किसी व्यक्ति को क्रय या दान द्वारा इतनी भूमि प्राप्त करने की अनुज्ञा न दी जाएगी कि उसका खाता 30 एकड़ से अधिक का हो जाए।

सार्वजनिक उपयोगिता की सब भूमि, जैसे आबादी स्थल, रास्ते, बंजर भूमि, जंगल, मीनाशय, सार्वजनिक कुयें, तालाब और जल–प्रणालियों, गांव समाज के, जिसमें गांव के सभी निवासी तथा पाही–काश्त कृषक सम्मिलित होंगे, स्वत्वाधिकार में आएगी। गाँव समाज की निवासी तथा

पाही–काश्त कृषक सम्मिलित होंगे, स्वत्वाधिकार में आएगी। गांव समाज की ओर से कार्य संचालन में गांव–पंचायत को भूमि के प्रबन्ध के विस्तृत अधिकार दिये गये हैं। गांव को छोटा या प्रजातंत्र और सहकारी समाज बनाने की इस व्यवस्था का अभिप्राय आर्थिक और सामाजिक विकास की सुविधा देना और सामाजिक उत्तरदायित्व और भाईचारे का प्रोत्साहन है।

वर्तमान अलाभकर खातों की खेती के सम्बन्ध में होने वाली हानि और अकुशलता को दूर करने के लिए इस बिल में हमारी स्थिति के अनुकूल सहकारी खेती के प्रोत्साहन और शीघ्र उन्नति की व्यवस्था की गई है।

इस ऐक्ट के पास होने पर यथाशीघ्र उसके निदेशों को सरकारी आस्थानों पर भी लागू करने का विचार किया जाता है। म्यूनिसिपैलिटी, कैन्टूनमेंट, नोटिफाइड एरिया और टाउन ऐरिया की सीमाओं में स्थित कृषि क्षेत्रों के सम्बन्ध में अलग कानून बनाने पर विचार किया जा रहा है। ऐसे मध्यवतियों के, जिनके अधिकार हस्तगत कर लिये जायेंगे, ऋण कम करने के लिए एक दूसरा बिल होगा।

mÙkj çn'k ckyd vf/kfu;e] 1951

¼mÙkj çn'k vf/kfu;e l[;k 1] 1952½

(उत्तर प्रदेश विधान परिषद् ने दिनांक 26 सितम्बर, 1951 उत्तर प्रदेशीय विधान सभा ने दिनांक 28 सितम्बर, 1951 की बैठक में स्वीकृत किया)

(भारत का संविधान के अनुच्छेद 201 के अन्तर्गत राष्ट्रपति ने दिनांक 5 फरवरी 1952 ई. को स्वीकृति प्रदान की और उत्तर प्रदेशीय सरकारी असाधारण गजट में दिनांक 19 फरवरी, 1952 ई. को प्रकाशित हुआ।)

बालकों के निरोधन (कस्टडी), अभिरक्षण (प्रोटेक्शन), इलाज और पुनर्वासन सम्बन्धी विधि को संहत और संशोधित करने के लिए तथा अवयस्क अपराधियों के निरोधन, अभियोग की सुनवाई और दण्ड की व्यवस्था के लिये तथा उत्तर प्रदेश में प्रवर्तन के लिए रिफ़ार्मेटरी स्कूल्स एक्ट, 1897 में संशोधित करने के लिए अधिनियम

बालकों के निरोधन, अभिरक्षण, इलाज और पुनर्वासन तथा अवयस्क अपराधियों के निरोधन, अभियोग की सुनवाई और दण्ड एवं उत्तर प्रदेश में प्रवर्तन के लिए रिफ़ार्मेटरी स्कूल्स ऐक्ट, 1897, में संशोधन करने की व्यवस्था करना आवश्यक है। अतः वह अधिनियम बनाया गया।

कुछ मामलों में ''आज का डाकू कल का अवयस्क अपराधी, परसों का अबोध बालक होता है'' इसलिए यह आवश्यक है कि अवयस्क कानून तोड़ने वाले के साथ उसको सुधारने की नीति से व्यवहार किया जाय और राज्य सरकार को उस बालक की, जो किसी दुश्चरित्र व्यक्ति के पास पाया जाय या जिसको समाज के दूषित वातावरण में पड़कर अपराधों के प्रोत्साहन मिले हों, अभिभावक के कर्तव्यों का पालन करो,

इस विधेयक का ध्येय इस लक्ष्य की पूर्ति करनी है। बम्बई, मद्रास, बंगाल, पंजाब और मध्यप्रदेश की सरकार और संसार के समस्त सभ्य देशों में (Childrens Act) बालकों के सुधारक अधिनियम हैं, जो विधेयक के इस लक्ष्य की पूर्ति करते हैं।

विधेयक वास्तव में उन 16 वर्षों से कम बालकों के संरक्षण और दण्ड के सम्बन्ध में है, जो ऐसे अपराध करें जिनको सजा काला पानी या कैद हो। विधेयक में उन अवयस्क अपराधियों की जमानत की गुंजाइश रखी गई है, जिनको थाने का थानेदार तुरन्त न्यायालय में उपस्थित नहीं कर सकता और उन अवयस्क अपराधियों का उचित संरक्षण जो जमानत पर न छोड़े गये हों। न्यायालय को यह अधिकार दिया गया है कि वह अवयस्क अपराधियों को सरकार से अनुमोदित स्कूलों या इस काम के लिये स्वीकृत संस्थाओं को सौंप दे या उचित चेतावनी के पश्चात बिलकुल मुक्त कर दे अथवा उत्तम आचरण बनाये रखने के लिये परीक्षण–काल के लिये छोड़ दें और उसको माता–पिता, अभिभावक अथवा उपयुक्त व्यक्ति की देखभाल में दे। बालक की देखभाल के लिये बालक के माता–पिता से नकद रुपये के रूप में सहायता लेने, बालकों का छात्रावास में पालन–पोषण करने और बालकों को आज्ञा से रखने पर, अवयस्क अपराधियों को सरकार के बिलकुल या कुछ प्रतिबन्धों के साथ मुक्त करने, स्कूलों तथा दूसरी संस्थाओं का स्थापन, उनका प्रबन्ध उनकी जांच और जहां तक सम्भव हो पृथक न्यायालयों के स्थापन करने, जिनमें बालकों पर अभियोग चलाये जायं और अवयस्क अपराधियों का संरक्षण अभियोग तथा दण्ड सम्बन्धित मामलों के लिये इस विधेयक में उपलब्ध रखे गये हैं।

इस विधेयक में 16 वर्ष से कम आयु के बालक को, जो आवारा घूमता हो, जिसका ठिकाना न हो, जिसके रहने की कोई जगह न हो, जिसके खाने–पीने का कोई सहारा न जान पड़ता हो, जिसके माता–पिता तथा अभिभावक न हों, या जिसके माता–पिता तथा अभिभावक उसकी

देखभाल के योग्य न हों और जो दूषित समाज में पड़ रहा हो, और उसके लिये नैतिक पतन का भय हो या जो बस में न हो, रक्षण और देखभाल की गुंजाइश भी है।

सारांश यह है कि विधेयक में ऐसी योजना है जिससे अवयस्क अपराधी को अपराधी न समझा जाय, बल्कि वह सोसाइटी की संरक्षता में हो और यह कि उसको राज्य का एक लाभकर नागरिक बनाने के लिये संरक्षता तथा अनुशासन की आवश्यकता है और उन बालकों के लिये भी व्यवस्था है जिनके लिये देखभाल और रक्षा की आवश्यकता है।

mÙkj çn'k jkT; fo/kku e.My lnL; vugrk&fuokj.k vf/kfu;e] 1952

¼mÙkj çn'k vf/kfu;e la[;k 4] 1952½

(उत्तर प्रदेशीय विधान सभा ने दिनांक 14 मार्च, 1952 तथा उत्तर प्रदेशीय विधान परिषद् ने दिनांक 18 मार्च, 1952 की बैठक में स्वीकृत किया।)

(भारत संविधान के अनुच्छेद 200 के अन्तर्गत राज्यपाल ने दिनांक 2 अप्रैल, 1952 को स्वीकृति प्रदान की और उत्तर प्रदेशीय सरकारी असाधारण गजट में दिनांक 9 अप्रैल, 1952 को प्रकाशित हुआ।)

कुछ ऐसे पदों के सम्बन्ध में यह घोषित करने के लिए कि उन पर अध्यासीन व्यक्ति उक्त पदों के कारण राज्य विधान मण्डल के सदस्य चुने जाने या बने रहने के लिए अनर्ह न होंगे अधिनियम।

यह आवश्यक है कि कुछ लाभप्रद पदों के सम्बन्ध में यह घोषित किया जाय कि उन पर अध्यासीन व्यक्ति उक्त पदों के कारण राज्य विधान मण्डल के सदस्य चुने जानें या बने रहने के लिए अनर्ह न होंगे; इसलिए यह अधिनियम बनाया गया है।

उत्तर प्रदेश राज्य विधान मण्डल के सदस्यों की अनर्हता–निवारण अध्यादेश, 1951 गर्वनर महोदय द्वारा कुछ लाभप्रद पदों के सम्बन्ध में यह घोषित करने के लिए कि उन पर अध्यासी व्यक्ति उक्त पदों के कारण राज्य विधान मण्डल के सदस्य चुने जाने या बने रहने के लिए अनर्ह न होंगे, 24 नवम्बर, 1951 को प्रचारित किया गया था। इस

अध्यादेश का व्यापार विधान मण्डल के फिर से समवेत होने के दिनांक से छः सप्ताह के बाद समाप्त हो जायेगा। यह आवश्यक है कि इस अध्यादेश के स्थान पर विधान मण्डल का एक अधिनियम बनाया जाय। अतः यह अधिनियम उपर्युक्त प्रयोजन की पूर्ति के लिये बनाया गया।

mÙkj çn'k tkr pdcUnh vfèkfu;e] 1953

¼mÙkj çn'k vf/kfu;e l[;k 5] 1954½

(उत्तर प्रदेश विधान सभा ने दिनांक अप्रैल 2, 1953 तथा उत्तर प्रदेशीय विधान परिषद् ने दिनांक अप्रैल 20, 1953 की बैठक में स्वीकृत किया)

कृषि के विकास के निमित्त उत्तर प्रदेश में कृषि सम्बन्धी जोतों की चकबन्दी की व्यवस्था करने के लिए अधिनियम

यह आवश्यक है कि कृषि के विकास के निमित्त उत्तर प्रदेश में कृषि सम्बन्धी जोतों की चकबन्दी की व्यवस्था की जाय। अतएव यह अधिनियम बनाया गया।

1950 के उत्तर प्रदेश जमींदारी विनाश और भूमि व्यवस्था अधिनियम के प्रचलित होने के बाद इस राज्य में जोतों की चकबन्दी की स्वभावतः गहरी मांग हुई। स्वामित्व तथा कृषि सम्बन्धी जटिल एवं विभिन्न प्रकार के भौमिक अधिकार सफल चकबन्दी में प्रधान रुप से बाधक थे उनके समाप्त हो जाने पर इस कार्य के प्रारम्भ का यह सुन्दर अवसर है। एक ही परिवार द्वारा खेती किये जाने वाले सभी गाटों के संहत होने के लाभों का संक्षेप में उल्लेख ही पर्याप्त है। चकबन्दी से मेड़ों की संख्या तथा विस्तार बहुत हो जायेंगे। और इस प्रकार मेड़ों के विषय में होने वाले झगड़े भी कम हो जायेंगे और भूमि की बचत भी होगी। इससे खेत बड़े हो जायेंगे और खेतों तक आने जाने में कम समय भी लगेगा। भूमि के एकत्र होने पर एकान्तता के लिए तथा अनाधिकार प्रवेश, चोरी एवं सीलाबिन जाने को रोकने के हेतु घेरे–जैसे पाढ़ और किनारे पर झाड़ियां तथा खाइयां बनायी जा सकेंगी। सिंचाई तथा पानी के निकास

का नियंत्रण सरल हो जायगा तथा फसलों में लगने वाले कीड़ों तथा बीमारियों की रोक थाम करने में कम कठिनाई होगी। अतएव अगस्त, 1952 में सरकार ने माल मंत्री की अध्यक्षता में इस राज्य में यथाशीघ्र जोतों की चकबन्दी करने की विशद योजना बनाने के लिए तथा यू.पी. कन्सालिडेशन आफ़ होल्डिग्स ऐक्ट, 1939 में संशोधन प्रस्तुत करने के लिए समिति नियुक्ति की। समिति ने 1939 के एक्ट के अधीन योजना की असफलता के कारणों की जांच करने के पश्चात् तथा उस उपसमिति की रिपोर्ट का अध्ययन करने के पश्चात् जिसने पंजाब (भारत) में जोतों की चकबन्दी की योजना का अध्ययन किया था, पंजाब के अनुरुप ही गांवों के सर्वांगीण उत्थान के हेतु एक समन्वित योजना की सिफ़ारिश की।

mÙkj çn'k
¼{k= ipk;r rFkk ftyk ipk;r½
vf/kfu;e] 1961
¼mRrj izn'k vf/kfu;e la[;k 33] 1961½

(उत्तर प्रदेश विधान सभा द्वारा हिन्दी में 14 सितम्बर, 1960 को तथा उत्तर प्रदेश विधान परिषद् द्वारा संशोधित सहित 1 मई, 1961 को पारित, जो उत्तर प्रदेश विधान सभा द्वारा 19 मई, 1961 को स्वीकार कर लिये गये)

(भारत के संविधान के अनुच्छेद 201 के अधीन राष्ट्रपति की स्वीकृति 29 नवम्बर, 1961 को प्राप्त हुई तथा दिनांक 3 दिसम्बर, 1961 के उत्तर प्रदेश असाधारण गजट में प्रकाशित हुआ)

उत्तर प्रदेश में क्षेत्र पंचायतों तथा जिला पंचायतों की स्थापना की व्यवस्था करने के लिए अधिनियम

यह इष्टकर है कि शासकीय कृत्यों के लोकतंत्रात्मक विकेन्द्रीकरण के सिद्धांत को आगे बढ़ाने, ग्राम्य क्षेत्रों में सम्यक् स्थानीय शासन सुनिश्चित करने और यूनाइटेड प्राविंसेज पंचायत राज ऐक्ट, 1947 के अधीन स्थापित ग्राम सभाओं के अधिकारों तथा कृत्यों का क्षेत्र पंचायतों तथा जिला पंचायतों से समन्वय करने के लिये खण्ड तथा जिला स्तरों पर कुछ शासकीय कृत्यों के सम्पादनार्थ उत्तर प्रदेश के जिलों में क्रमशः क्षेत्र पंचायतों तथा जिला पंचायतों की स्थापना की व्यवस्था की जाए। अतः यह अधिनियम बनाया गया।

mÙkj çn'k lgdkjh lfefr vfèkfu;e] 1965

¼mÙkj çn'k vf/kfu;e l[;k 11] 1966½

उत्तर प्रदेश सहकारी समितियों से सम्बन्ध विधि की संहत और संशोधित करने के लिए भारतीय गणतन्त्र के सोलहवें वर्ष में यह अधिनियम बनाया गया।

उत्तर प्रदेश में सहकारी अधिनियम, 1912 अब भी लागू है यद्यपि इसमें इस प्रदेश द्वारा विभिन्न अवसरों पर संशोधन किये गये हैं। जब से यह कानून बना, सहकारिता आंदोलन विभिन्न दिशाओं में विकसित हुआ है। सहकारिता की ओर राज्य सरकार की नीति में प्रगति हुई है और अब यह माना जाता है कि विकास के विभिन्न कार्यो के लिए सहकारिता ढंग से कार्य करना चाहिये। अनुभव ने यह बताया है कि कानून में सहकारी समितियों के कुछ अतिरिक्त कृत्यों तथा उत्तरदायित्वों व समितियों की देख–रेख, निदेशन व नियंत्रण करने वाले अधिकारियों के लिए प्राविधान करना चाहिए। परिवर्तित परिस्थितियों के लिए मौजूदा प्राविधानों को संशोधित या उदार बनाने की आवश्यकता है। सरकार, इसलिए यह उचित समझती है कि मौजूदा कानून को निरस्त करें व उसके स्थान पर नया कानून बनाये।

इस कानून की मुख्य व विशिष्ट बातें नीचे दी जा रही हैं:

1. गैर सरकारी व्यक्तियों का सहकारी समिति के प्रबन्ध में अधिक–से–अधिक सम्बन्ध रखने का प्राविधान किया गया है। इसी उद्देश्य से यह प्राविधान किया गया है कि समिति के चुने हुए सदस्यों में से ही समिति के अध्यक्ष का चुनाव होगा।

2. सहकारी समितियों का आर्थिक दृष्टि से सुदृढ़ आधार बनाने

के लिए तथा जनता के कमजोर वर्ग को सहकारी संस्थाओं से लाभ उठाने के लिए सहकारी समितियों को विभिन्न प्रकार से राज्य की ओर से सहायता दिये जाने का प्राविधान किया गया है, जैसे राज्य द्वारा समितियों को कर्ज, आर्थिक सहायता, अंशो की खरीदारी, डिबेन्चर के मूलधन व ब्याज की अदायगी के लिये गारण्टी देना व प्रमुख राज्य भागिता निधि व सहायक राज्य भागिता निधि का गठन।

3. निबन्धक द्वारा मध्यस्थ की कार्यवाही में दिये गये अवार्ड (अभिनिर्णय) के विरुद्ध अपील सुनने के लिए अपील न्यायाधिकरण का गठन।

4. निबन्धक द्वारा कुछ महत्वपूर्ण मामलों में दिये गये आदेशों के विरुद्ध अपील करने का प्राविधान।

5. सहकारी समिति की सदस्यता को विस्तृत करने का प्राविधान तथा समिति द्वारा किसी व्यक्ति के सदस्य बनने की प्रार्थना को अस्वीकार करने के आदेश के खिलाफ अपील करने का अधिकार दिया गया है।

6. सहकारी कृषि समितियों के कार्यकलापों व संगठन करने के लिए विशेष प्राविधान किया गया है और उस सम्बन्ध में जो उपबन्ध जमींदारी विनाश व भूमि सुधार कानून में थे, उनको निरस्त करने का प्राविधान है।

7. इस अधिनियम के अर्न्तगत जो आदेश, अभिनिर्णय या डिकरी हुई है उनकी इजराय की प्रक्रिया को सरल तथा प्रभावी किया गया है।

8. सहकारिता आंदोलन के इस उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए कि इसके प्रबन्ध में सहकारी हस्तक्षेप कम–से–कम हो तथा लोकतान्त्रिक ढंग से कार्य हो, यह प्राविधान किया गया है कि राज्य सरकार एक या एक से अधिक संघीय प्राधिकारी बनाये जो सहकारी समितियों को या सहकारी समितियों के वर्ग की देख–रेख करे तथा निबन्धक को यह शक्ति दी जाए कि वह ऐसे प्राधिकारी के किसी अधिकारी या अधिकारियों को अधिकार दे कि वे समितियों के कार्य का निरीक्षण करें तथा उनके हिसाब–किताब की परीक्षा करें।

mÙkj çn'k
x.Mk fu;a=.k vfèkfu;e] 1970
¼mÙkj çn'k vf/kfu;e l[;k 8] 1971½

(उत्तर प्रदेश विधान परिषद् ने दिनांक 15 दिसम्बर, 1970 तथा उत्तर प्रदेश विधान सभा ने दिनांक 24 दिसम्बर, 1970 की बैठक में स्वीकृत किया।)

('भारत का संविधान' के अनुच्छेद 201 के अर्न्तगत राष्ट्रपति ने दिनांक 13 जनवरी, 1971 को स्वीकृति प्रदान की थी तथा उत्तर प्रदेशीय सरकारी आसाधारण गजट में दिनांक 18 जनवरी, 1971 को प्रकाशित हुआ)

सार्वजनिक व्यवस्था बनाये रखने के उद्देश्य से गुंडों पर नियंत्रण करने और उनकों दबाने के निमित्त विशेष व्यवस्था करने के लिए अधिनियम

इधर कुछ वर्षों से राज्य में गुंडागर्दी की घटनाओं में वृद्धि हुई हैं। प्रायः देखने में यह आता है कि कुछ असामाजिक तत्व शांतिपूर्ण नागरिकों की जान, सम्मान या सम्पत्ति के लिए त्रास, संकट और हानि के कारण बने हुए है जिससे समाज में लोगों के अन्दर असुरक्षा की भावना पैदा होती है। गुंडों की गतिविधियों पर नियंत्रण हेतु तथा उनके असामाजिक कार्यों की रोकथाम के लिए और उनको समुचित दंड देने के लिए इस समय कोई उपयुक्त प्राविधान नहीं है।

अतएव यह आवश्यक समझा गया है कि प्रदेश में सार्वजनिक व्यवस्था बनाये रखने व गुंडों पर नियंत्रण करने के लिए इस राज्य में एक कानून होना चाहिए। इसलिए यह अधिनियम बनाया गया।

mÙkj çn'k phuh miØe ¼vtqu½ vf/kfu;e] 1971

¼mÙkj çn'k vf/kfu;e la[;k 23] 1971½

(उत्तर प्रदेश विधान सभा ने दिनांक 16 अगस्त, 1971 तथा उत्तर प्रदेश विधान परिषद् ने दिनांक 18 अगस्त, 1971 की बैठक में स्वीकृत किया)

(भारत का संविधान के अनुच्छेद 201 के अन्तर्गत राष्ट्रपति ने दिनांक 22 अगस्त, 1971 को स्वीकृति प्रदान की तथा उत्तर प्रदेशीय सरकारी असाधारण गजट में दिनांक 22 अगस्त, 1971 को प्रकाशित हुआ।)

कतिपय चीनी उपक्रमों का जनसाधारण के हित में अर्जन और अंतरण करने की तथा उससे सम्बन्धित या उसके आनुषंगिक विषयों के लिये, व्यवस्था करने का अधिनियम

राज्य की कतिपय चीनी मिलों के मालिकों अथवा पट्टेदारों ने ऐसी गम्भीर समस्यायें उत्पन्न कर दी थी जिनका प्रतिकूल प्रभाव उन क्षेत्रों से सम्बन्धित उत्पादकों व मजदूरों पर व उन क्षेत्रों की साधारण अर्थ–व्यवस्था पर जहां वे मिलें स्थित हैं पड़ रहा था। इन समस्याओं को सुलझाने का केवल एक ही मार्ग रह गया था कि राज्य सरकार उन मिलों को अर्जित कर लें और उनके नवीनीकरण, पुनःस्थापना और सुधार के कार्य की तुरन्त व्यवस्था करें।

ऐसी मिलों के अर्जन के हेतु एक विधायन तैयार किया गया जिसमें उन मिलों से सम्बन्धित सम्पत्तियों और परिसम्पत्तियों के अर्जन की तथा उसके लिए प्रतिकर देने की और प्रतिकर में से गन्ना उत्पादकों, मजदूरों व सरकार के देयों की तथा अन्य सम्बन्धित या

आनुषंगिक विषयों की व्यवस्था की गई।

अगले पेराई मौसम से पहले मिलों का पेराई के लिए तैयार करने के लिए सामान्य वार्षिक मरम्मत (जो गैर–पेराई मौसम में की जाती है) इत्यादि के कार्य को समय से करना था, और चूंकि उपलब्ध समय थोड़ा रह गया था, इसलिए तुरन्त कार्यवाही करना आवश्यक हो गया था। क्योंकि राज्य विधान–मंडल के दोनों सदन सत्र में नहीं थे, इसलिए श्री राज्यपाल ने दिनांक 3 जुलाई, 1971, को उत्तर प्रदेश चीनी उपक्रम (अर्जन), अध्यादेश, 1971 प्रख्यापित किया।

बाद में राज्य सरकार ने यह भी निर्णय लिया है कि गन्ना–उत्पादकों व मजदूरों के देयों को राज्य सरकार के कर व अन्य अप्रतिभूत देयों से भी उच्चतर प्राथमिकता दी जाय।

mÙkj çn'k cfld f'k{kk vf/kfu;e] 1972

¼mÙkj çn'k vf/kfu;e l[;k 34] 1972½

(उत्तर प्रदेश विधान सभा ने दिनांक 1 अगस्त, 1972 तथा उत्तर प्रदेश विधान परिषद् ने दिनांक 4 अगस्त 1972 की बैठक में स्वीकृत किया।)

('भारत का संविधान' के अनुच्छेद 200 के अन्तर्गत राज्यपाल ने दिनांक 17 अगस्त 1972 को स्वीकृति प्रदान की तथा उत्तर प्रदेशीय सरकारी असाधारण गजट में दिनांक 19 अगस्त, 1972 को प्रकाशित हुआ)

बेसिक शिक्षा परिषद् की स्थापना करने और तत्संबंधी विषयों की व्यवस्था करने के लिए अधिनियम

अब तक ग्रामीण क्षेत्रों में प्राथमिक शिक्षा का उत्तरदायित्व जिला परिषदों तथा नगर क्षेत्रों में नगरपालिकाओं तथा महापालिकाओं पर रहा हैं। इस स्तर की शिक्षा का संचालन स्थानीय निकायों द्वारा संतोषप्रद ढंग से नहीं हो रहा था और दिनोदिन शिक्षा प्रणाली ह्रासोन्मुख होती जा रही थी। जनमत की यह आकांक्षा थी कि शासन इस स्तर की शिक्षा सुधारने की दिशा में तुरन्त कदम उठाये। अतः प्राथमिक शिक्षा के सुधार, विकास एवं व्यापक प्रसार हेतु यह आवश्यक हो गया कि शासन इसका नियंत्रण अपने हाथ में ले।

प्राथमिक शिक्षा का नियंत्रण स्थानीय निकायों के प्रबन्ध से हटाकर शासकीय नियंत्रण में लाने हेतु सदनों में भी बराबर मांग सभी ओर से की जा रही थी। इस जन आकांक्षा को प्रतिध्वनित करते हुए 20 मार्च 1972 को राज्यपाल महोदय ने भी राज्य विधान मण्डल के दोनों सदनों

को संबोधित करते हुए अपने अभिभाषण में कहा था कि प्राथमिक शिक्षा तथा जूनियर हाई स्कूलों को अधिक उपयोगी और सुदृढ़ बनाने के लिए सरकार उनके संचालन और नियंत्रण का सम्पूर्ण भार अपने ऊपर लेने जा रही है।

संविधान के अनुच्छेद 45 के उद्देश्यों की पूर्ति की दिशा में प्रभावकारी पग उठाने, राज्यपाल के अधिभाषण में दिए गए आश्वासनों की पूर्ति करने तथा लोकप्रिय मांग का समादर करने के हेतु यह आवश्यक था कि प्राथमिक शिक्षा का संचालन एवं नियंत्रण किसी ऐसी सजीव संस्था के सुपुर्द किया जाय जो इसमें नवजीवन का संचार कर इसे प्रगतिशील बना सके। इसलिए शासन द्वारा प्राथमिक शिक्षा का नियंत्रण स्थानीय निकायों से हटा कर उत्तर प्रदेश बेसिक शिक्षा बोर्ड को शैक्षिक सत्र 1972–73 से सौंपने का निर्णय लिया गया।

चूंकि शैक्षिक सत्र प्रारंभ हो गया था और अभी विधान परिषद् का सत्र चालू नहीं था और यदि तुरन्त कार्यवाही प्रारंभ न की जाती तो यह मामला आगामी शैक्षिक सत्र (1973–74) तक टल जाता और अभीष्ट उद्देश्य की पूर्ति न हो पाती। अतः शासन ने उक्त निर्णय को तुरन्त कार्यान्वित करने के लिये उत्तर प्रदेश बेसिक शिक्षा अध्यादेश, 1972 प्रख्यापित किया।

mÙkj çn'k ou fuxe vf/kfu;e] 1974

¼mÙkj çn'k vf/kfu;e l[;k 4] 1975½

(उत्तर प्रदेश विधान सभा ने दिनांक 27 दिसम्बर, 1974 तथा उत्तर प्रदेश विधान परिषद् ने दिनांक 26 फरवरी, 1975 की बैठक में स्वीकृत किया)

भारत का संविधान'' के अनुच्छेद 200 के अन्तर्गत राज्यपाल ने दिनांक 6 मार्च, 1975 को अनुमति प्रदान की तथा उत्तर प्रदेशीय सरकारी आसाधारण गजट में दिनांक 13 मार्च, 1975 को प्रकाशित हुआ।

राज्य में वनों के अपेक्षाकृत अच्छे परिरक्षण, पर्यवक्षण तथा विकास और वन–उपज के अपेक्षाकृत अच्छे विमोहन के लिये एक निगम की स्थापना तथा उससे सम्बन्धित विषयों को व्यवस्था करने के लिये यह अधिनियम बनाया गया।

mÙkj çn'k fHk{kkofÙk çfr"k/k vfèkfu;e] 1975

¼mÙkj çn'k vf/kfu;e l[;k] 36] 1975½

(उत्तर प्रदेश विधान परिषद् ने दिनांक 6 अगस्त, 1975 तथा उत्तर प्रदेश विधान सभा में दिनांक 8 अगस्त, 1975 की बैठक में स्वीकृत किया।)

(भारत का संविधान के अनुच्छेद 200 के अन्तर्गत राज्यपाल ने दिनांक 14 अगस्त, 1975 को अनुमति प्रदान की तथा उत्तर प्रदेशीय सरकारी असाधारण गजट में दिनांक 22 अगस्त, 1975 को प्रकाशित हुआ।)

भिक्षावृत्ति रोकने और तत्सम्बन्धी विषयों का उपबन्ध करने के लिए यह अधिनियम बनाया गया।

mÙkj çn'k jkT; fo/kku e.My ¼lnL;ksa dh miyfC/k;ksa vkj i'ku½ vf/kfu;e] 1980

¼mÙkj çn'k vf/kfu;e la[;k 23 lu 1980½

राज्य विधान मण्डल के सदस्यों के वेतन और भत्तों के भुगतान, और अन्य सुविधाओं से संबंधित विधि का समेकन और संशोधन करने के लिए अधिनियम

राज्य विधान मण्डल के सदस्यों के वेतन, निर्वाचन क्षेत्र भत्ता, यात्रा सुविधा, आनुषांगिक व्यय, दैनिक भत्ता, सदस्यों के लिये आवास व्यवस्था, टेलीफोन की सुविधा, भूतपूर्व सदस्यों की पेंशन की व्यवस्था हेतु यह अधिनियम बनाया गया।

mÙkj çn'k ykd lsok ¼vuqlfpr tkfr;ksa vkj vuqlfpr tutkfr;ksa ds fy, vkj{k.k½ vf/kfu;e] 1993

¼mÙkj çn'k vf/kfu;e l[;k 3 lu 1993½

अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के व्यक्तियों के पक्ष में पदों के आरक्षण की व्यवस्था करने और उससे सम्बद्ध या आनुषंगिक विषयों के लिए यह अधिनियम बनाया गया।

mÙkj çn'k vYil[;d vk;kx vf/kfu;e] 1994
¼o"k 1994 dk ckbl l ok vf/kfu;e½

पुरःस्थापित	विधान परिषद्	19 अगस्त, 1994
पारित	विधान परिषद्	23 अगस्त, 1994
पारित	विधान सभा	24 अगस्त, 1994
राज्यपाल का अनुमति		27 अगस्त ,1994

राज्य के अल्पसंख्यकों की विभिन्न समस्याओं और कठिनाइयों के अध्ययन के लिए और समय–समय पर राज्य सरकार को सलाह देने के लिए राज्य में अल्पसंख्यकों के लिए एक आयोग कार्य कर रहा था। उक्त आयोग का गठन राज्य सरकार के आदेशों द्वारा विनियमित किया जा रहा था। चूँकि आयोग को कोई विधिक प्रास्थिति नहीं थी, इसका गठन समय–समय पर सरकार के परिवर्तन के कारण प्रभावित होता था जिसके कारण आयोग कारगर रूप से कार्य नहीं कर सका। अतएव, यह विनिश्चय किया गया कि भारत सरकार द्वारा अधिनियमित नेशनल कमीशन फार माइनरिटीज ऐक्ट, 1992 के तर्ज पर अल्प संख्यकों के लिए आयोग गठन की व्यवस्था करने के लिए एक विधि–नियमित की जाए ताकि वह राज्य में अल्पसंख्यकों के हितों के रक्षोपाय में स्वतंत्रता पूर्वक कार्य कर सके।

चूँकि राज्य विधान मण्डल सत्र में नहीं था और इस मामले में तुरन्त विधायी कार्यवाही करना आवश्यक था, अतएव राज्यपाल द्वारा 15 जुलाई 1994 को उत्तर प्रदेश अल्पसंख्यक आयोग अध्यादेश, 1994 उत्तर प्रदेश अध्यादेश संख्या 13 सन् 1994 प्रख्यापित किया गया।

mÙkj çn'k ykd lok vu|lfpr tkfr;k] vu|lfpr tu&tkfr;k vkj fiNM oxk d fy; vkj{k.k vf/kfu;e] 1994

¼o"k 1994 dk pkFkk vf/kfu;e½

अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जन–जातियों और नागरिकों के अन्य पिछड़े वर्गों से संबंधित व्यक्तियों के पक्ष में लोक सेवाओं और पदों पर आरक्षण की और उससे संबंधित या आनुषंगिक विषयों की व्यवस्था करने के लिये अधिनियम

पुरः स्थापित	विधान सभा	8 मार्च, 1994
पारित	विधान सभा	9 मार्च, 1994
पारित	विधान परिषद्	18 मार्च, 1994
राज्यपाल की अनुमति		22 मार्च, 1994

राज्य के क्रियाकलापों के सम्बन्ध में लोक सेवाओं और पदों पर पिछड़े वर्गों के पक्ष में आरक्षण की व्यवस्था करने की दृष्टि से उत्तर प्रदेश लोक सेवा (पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण) अधिनियम, 1989 अधिनियमित किया गया था। सीधी भर्ती में पिछड़े वर्गो के पक्ष में 27 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था करने के लिए मण्डल आयोग की सिफारिशों को लागू करने हेतु उपर्युक्त अधिनियम को उत्तर प्रदेश लोक सेवा। (पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण) संशोधन अधिनियम, 1993 द्वारा संशोधित किया गया। इसके साथ ही अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के पक्ष में आरक्षण की व्यवस्था करने के लिए उत्तर प्रदेश लोक सेवा

(अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षण) अधिनियम, 1993 भी अधिनियमित किया गया। तदोपरान्त उपर्युक्त अधिनियमों के उपबन्धों के सम्बन्ध में विभिन्न श्रोतों से सुझाव प्राप्त हुए। सुझावों पर विचार करने के पश्चात् और पिछड़े वर्गों और अनुसूचित जनजातियों के पक्ष में आरक्षण के संबंध में उपबन्धों को अधिक प्रभावी बनाने के लिए उक्त दोनों अधिनियमों के उपबन्धों को समेकित करने और उन्हें निरसित करते हुये एक विधान बनाने का विनिश्चय किया गया।

mÙkj çn'k vuqlfpr tkfr vkj vuqlfpr tutkfr vk;ksx vf/kfu;e] 1995

¼o"k 1995 dk lkygok vf/kfu;e½

अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिये आयोग की स्थापना और उससे संबंधित और आनुषांगिक विषयों की व्यवस्था करने के लिये अधिनियम

पुरः स्थापित	विधान परिषद्	23 अगस्त, 1994
पारित	विधान परिषद्	24 अगस्त, 1994
पारित	विधान सभा	6 फरवरी, 1995
राज्यपाल की अनुमति		7 अगस्त, 1995

राज्य में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के हितों की रक्षा के लिये राज्य सरकार के कार्यकारी आदेश द्वारा आयुक्त, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति की नियुक्ति की गयी थी लेकिन विधिक प्रास्थिति के अभाव में आयुक्त कारगर ढंग से कार्य नहीं कर सका। अतएव, यह विनिश्चय किया गया कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए राष्ट्रीय आयोग के तर्ज पर राज्य में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जन जातियों के लिये आयोग की स्थापना की व्यवस्था करने के लिए एक विधि अधिनियमित की जाय। अन्य बातों के साथ–साथ आयोग के कृत्यों में संविधान या किसी अन्य राज्य विधि के अधीन था राज्य सरकार के किसी आदेश के अधीन अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए किये गये रक्षोपायों से सम्बन्धित सभी मामलों की जांच करना और इन रक्षोपायों

के प्रभावी क्रियान्वयन के लिये और अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के संरक्षण, कल्याण और सामाजिक–आर्थिक विकास के लिए अन्य उपायों की राज्य सरकार से सिफारिश करना है।

चूंकि राज्य विधान मण्डल सत्र में नहीं था और उपर्युक्त विनिश्चिय को क्रियान्वित करने के लिए तुरन्त विधायी कार्यवाही आवश्यक थी अतएव, राज्यपाल द्वारा 8 अगस्त, 1994 को उत्तर प्रदेश अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति आयोग अध्यादेश, 1994 (उत्तर प्रदेश अध्यादेश संख्या 14 सन् 1994) प्रख्यापित किया गया था।

mÙkj çn'k jkT; mPp f'k{kk ifj"kn vf/kfu;e] 1995

¼o"k 1995 dk ckbl ok vf/kfu;e½

mÙkj çn'k e jkT; mPp f'k{kk ifj"kn dh LFkkiuk d fy; vkj mlls lEc) vkj vku"kfxd fo"k;ksa dh 0;oLFkk djus d fy; vf/kfu;e

पुरः स्थापित	विधान सभा	27 जुलाई, 1995
पारित	विधान सभा	31 जुलाई, 1995
पारित	विधान परिषद्	23 अगस्त, 1995
राज्यपाल की अनुमति		25 अगस्त, 1995

उच्च शिक्षा के मानक स्तर को बनाये रखने के लिये हर सम्भव प्रयास करने और विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा जारी दिशा निर्देशों के अनुसार उच्च शिक्षा के गुणात्मक स्तर का अवधारणा और समन्वय करने के लिये राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 और उसके अधीन बनायी गयी कार्य योजना में प्रत्येक राज्य में विधिक स्तर रखने वाले एक राज्य स्तरीय उच्च शिक्षा परिषद के गठन के लिए संस्तुतियां की गई हैं। नई शिक्षा नीति के अधीन नियत किये गये लक्ष्यों की प्राप्ति और उनके क्रियान्वयन के लिए सुझाव देने के संबंध में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा उच्च शिक्षा के विभिन्न पहलुओं के अध्ययन हेतु एक समिति गठित की गयी थी। इस समिति ने भी प्रत्येक राज्य में एक उच्च शिक्षा परिषद् की स्थापना के लिए सुझाव दिया। दिनांक 22 अप्रैल, 1994 को आयोजित राज्य विश्वविद्यालयों के कुलपतियों के सम्मेलन में, यह घोषणा की गई कि राज्य सरकार प्रदेश में राज्य उच्च

शिक्षा परिषद् के गठन के लिये सिद्धान्त रूप से सहमत है। अतः यह विनिश्चय किया गया कि इस प्रदेश में राज्य उच्च शिक्षा परिषद की स्थापना की व्यवस्था की जाय जो एक निगमित निकाय होगी।

चूंकि, राज्य विधान मण्डल सत्र में नहीं था और उपर्युक्त विनिश्चय को तुरन्त कार्यान्वित करना आवश्यक था अतः राज्यपाल द्वारा दिनांक 25 मई, 1995 को उत्तर प्रदेश राज्य उच्च शिक्षा परिषद अध्यादेश, 1995 (उत्तर प्रदेश अध्यादेश संख्या 26 सन् 1995) प्रख्यापित किया गया।

mÙkj çns'k jkT; efgyk vk;kx vf/kfu;e] 2001

¼mÙkj çns'k vf/kfu;e la[;k 34 lu~ 2001½

jkT; efgyk vk;kx dh LFkkiuk djus vkSj mlls lEcaf/kr ;k vkuq"kafxd fo"k;ksa dh O;oLFkk djus ds fy;s vf/kfu;e

पुरः स्थापित	विधान सभा	27 सितम्बर, 2001
पारित	विधान सभा	27 सितम्बर, 2001
	विधान परिषद	28 सितम्बर, 2001
राज्यपाल की अनुमति		05 अक्टूबर, 2001

महिलाओं की, जो जनसंख्या की लगभग आधी हैं, असमान प्रतिष्ठा और उनके साथ अनुचित व्यवहार बड़े चिन्ता का विषय है। राज्य सरकार जीवन के सभी क्षेत्रों में उनके कल्याण, सुरक्षा, संरक्षण और उत्थान को अत्यधिक महत्व देती है और समाज में उनकी प्रतिष्ठा की अभिवृद्धि सुनिश्चित करने के लिए यह विनिश्चय किया गया कि महिलाओं को दिये गये संवैधानिक और विधिक रक्षोपायों से सम्बन्धित मामलों का अनुश्रवण करने और उनके प्रभावी उपचारी उपायों के सम्बन्ध में राज्य सरकार को रिपोर्ट और सुझाव देने के लिए एक स्वतंत्र आयोग की स्थापना की जाय।

चूंकि राज्य विधान मण्डल सत्र में नहीं था और उपर्युक्त विनिश्चय को कार्यान्वित करने के लिए तुरन्त विधायी कार्यवाही करना आवश्यक था अतः राज्यपाल द्वारा दिनांक 16 अगस्त, 2001 को उत्तर प्रदेश राज्य महिला आयोग अध्यादेश, 2001 (उत्तर प्रदेश अध्यादेश संख्या 17 सन् 2001) प्रख्यापित किया गया।

mÙkj çn'k enjlk f'k{kk ifj"kn vf/kfu;e] 2004

¼mÙkj çn'k vf/kfu;e l[;k 29 lu 2004½

jkT; e enjlk f'k{kk ifj"kn dh LFkkiuk vkj mlls lEcfèkr ;k vku"kfxd fo"k;k dh 0;oLFkk djus d fy; vf/kfu;e

पुरः स्थापित	विधान सभा	30 नवम्बर, 2004
पारित	विधान सभा	30 नवम्बर, 2004
पारित	विधान परिषद्	30 नवम्बर, 2004
राज्यपाल की अनुमति		3 दिसम्बर, 2004

शिक्षा संहिता के पैरा 55 में रजिस्ट्रार अरबी–फारसी परीक्षायें, उत्तर प्रदेश, इलाहाबाद को प्रदेश में अरबी–फारसी मदरसों को मान्यता प्रदान करने और ऐसे मदरसों की परीक्षायें संचालित करने हेतु प्राधिकृत किया गया था। इन मदरसों का प्रबन्ध शिक्षा विभाग द्वारा किया जाता था। किन्तु वर्ष 1995 में अल्पसंख्यक कल्याण एवं वक्फ विभाग के सृजित हो जाने के फलस्वरूप ऐसे मदरसों से सम्बन्धित समस्त कार्य शिक्षा विभाग से अल्पसंख्यक कल्याण विभाग को स्थानांतरित कर दिया गया जिसके फलस्वरूप मदरसों से सम्बंधित समस्त कार्यों का सम्पादन निदेशक अल्पसंख्यक कल्याण, उत्तर प्रदेश और रजिस्ट्रार/निरीक्षक, अरबी फारसी मदरसा, उत्तर प्रदेश के नियंत्रण में किया जा रहा है। अरबी फारसी मदरसों का प्रशासन अरबी फारसी मदरसा नियमावली, 1987 के अधीन चलाया जा रहा था किन्तु चूंकि उक्त नियमावली किसी अधिनियम के अधीन नहीं बनाई है, अतएव उक्त नियमावली के अधीन मदरसों के संचालन में अनेक जटिलतायें उत्पन्न हो गई अतएव,

मदरसों के संचालन में उत्पन्न कठिनाईयों को दूर करने, उनमें गुणात्मक सुधार लाने, मदरसों में अध्ययनरत छात्रों को अध्ययन की अच्छी से अच्छी सुविधा प्रदान करने की दृष्टि से यह विनिश्चय किया गया कि एक विधि बनाकर राज्य में मदरसा शिक्षा परिषद की स्थापना और उससे सम्बन्धित या आनुषंगिक विषयों की व्यवस्था की जाय।

mÙkj çn'k vkink çcU/k vfèkfu;e] 2005

¼mÙkj çn'k vf/kfu;e l[;k 20 lu 2005½

mÙkj çn'k jkT; e vkink d çHkkoh çcU/k dh 0;oLFkk dju] vkink d çHkkok dk de dju] vkinkvk d ?kfVr gku d nkjku rFkk ckn e vkikr jkgr dk çcU/k dju] ml l|lk/; cuku] mldk leUo; dju vkj vuJo.k dju dk çcU/k vkj vkinkvk d ifj.kkeLo:i i|ufuek.k vkj i|uok l d mik;k dk ykx dju] mldk vuJo.k dju rFkk leUo; dju d fy; vkj bu ç;ktuk d fy; mÙkj çn'k vkink çcU/k çkf/kdj.k dh LFkkiuk dju d fy; vkj vU; vfHkdj.kk dk fofufn"V dju vkj ml l| lEcfU/kr ;k vku"kfxd fo"k;k dh 0;oLFkk dju d fy; vf/kfu;e

पुरः स्थापित	विधान सभा	28 जुलाई, 2005
पारित	विधान सभा	28 जुलाई, 2005
पारित	विधान परिषद	8 अगस्त, 2005
राज्यपाल की अनुमति		10 अगस्त, 2005

आपदा प्रबन्ध की एक समेकित और समन्वित प्रणाली, जिसके अन्तर्गत राज्य, स्थानीय प्राधिकरणों, स्टेक होल्डरों और समुदाय द्वारा रोकथाम भी है, का विकास करने के उद्देश्य से यह विनिश्चय किया गया कि आपदा प्रबन्ध और आपदा के पश्चात पुनर्निर्माण, पुनर्वास, मूल्यांकन और निर्धारण के लिए केन्द्रीय योजना, समन्वय और अनुश्रवण इकाई के रूप में कार्य करने, आपातकालीन राहत से सम्बन्धित नीति

निर्धारण में राज्य सरकार की सहायता करने, आपदा प्रबन्ध में प्रगति और समस्याओं के सम्बन्ध में राज्य सरकार और उसके विभागों को सूचित करने और सामान्य शिक्षा, क्षमता का विकास होने के लिए एक प्राधिकरण की स्थापना करने और उससे सम्बन्धित एवं अनुषांगिक विषयों की व्यवस्था करने के लिए एक विधि बनाई जाए।

mÙkj çns'k jkT; fof/k vk;kx vfèkfu;e] 2005

¼mÙkj çns'k vf/kfu;e l[;k 3 lu~ 2005½

jkT; fof/k ds l/kkj ds fy;s fo"k;ks dk ifjyf{kr djus grq jkT; es jkT; fof/k vk;kx dk xBu djus vkj mlls lEc) ;k vkuq"kfxd fo"k;ks dh 0;oLFkk djus ds fy;s vf/kfu;e

पुरःस्थापित	विधान सभा	2 मार्च, 2005
पारित	विधान सभा	12 मार्च, 2005
पारित	विधान परिषद	15 मार्च, 2005
राज्यपाल की अनुमति		16 मार्च, 2005

अधिनियमों का पुनरीक्षण एक सतत् प्रक्रिया है जिसकी आवश्यकता दीर्घकाल से रही है। केन्द्र सरकार द्वारा केन्द्रीय अधिनियमों का पुनरीक्षण करने और उनके सम्बन्ध में सुझाव देने के लिए केन्द्रीय विधि आयोग का गठन किया गया है जो एक स्थाई संस्था है और लम्बे अन्तराल से कार्यरत है। केन्द्रीय विधि आयोग ने अपने चौदहवें प्रतिवेदन में राज्यों में राज्य विधि आयोगों के गठन की सिफारिश की थी जिसके अनुसरण में बहुत से राज्यों में विधि आयोगों की स्थापना की जा चुकी थी। उत्तर प्रदेश में चार राज्य विधि आयोगों का गठन समय–समय पर किया गया था। किन्तु चूंकि उनका गठन अधिसूचना और शासनादेश द्वारा एक निश्चित अवधि के लिए किया गया था, अतः स्थायित्व के अभाव में उनका पूर्ण लाभ नहीं उठाया जा सका। राज्य विधान मण्डल के चार सौ से अधिक अधिनियम तत्समय प्रवृत्त थे जिनमें से कुछ अनावश्यक हो गये थे और बहुत से अधिनियमों में संशोधन की आवश्यकता

थी। अतएव, यह विनिश्चय किया गया कि राज्य विधि के सुधार के लिए विषयों को परिलक्षित करने और उससे सम्बन्धित या आनुषंगिक विषयों की व्यवस्था करने हेतु राज्य में राज्य विधि आयोग का गठन करने के लिए विधि बनायी जाय।

चूँकि राज्य विधान मण्डल सत्र में नहीं था और उपर्युक्त विनिश्चय को कार्यान्वित करने के लिए तुरन्त विधायी कार्यवाही करना आवश्यक था, अतएव राज्यपाल द्वारा दिनांक 12 जनवरी, 2005 को उत्तर प्रदेश राज्य विधि आयोग अध्यादेश, 2005 (उत्तर प्रदेश अध्यादेश संख्या 2 सन् 2005) प्रख्यापित किया गया।

तत्पश्चात यह विनिश्चय किया गया कि प्रतिस्थानी विधेयक में अंशकालिक सदस्य के रूप में उच्च न्यायालय के न्यायाधीश की नियुक्ति करने और अध्यक्ष या पूर्णकालिक सदस्य को क्रमशः उच्च न्यायालय के किसी आसीन न्यायमूर्ति की सहमति से या अध्यक्ष की सहमति से हटाये जाने के सम्बन्ध में उपबन्ध कर दिये जायं।

यह विधेयक उपर्युक्त अध्यादेश को उपर्युक्त संशोधन के साथ प्रतिस्थापित करने के लिए पुरःस्थापित किया गया है।

mÙkj çns'k fodkl ifj"kn vfèkfu;e] 2006

¼mÙkj çns'k vf/kfu;e l[;k 11 lu] 2006½

jkT; e fofu/kku ijd okrkoj.k r;kj dju] m|kxk dh LFkkiuk ,o fodkl dju] fd; x; fuos'k d vuqlkj fofufn"V m|kxk dk fo'k"k çkfLFkfr@çkRlkgu nu] vk|kfxdhdj.k dh çfØ;k e xfrjkèk@vojkèkk dk nj dju vkj jkT; e fofu/kku vkÑ"V dju] ljdkjh çfØ;k dk ljyhdj.k dju] jkT; e lok;ktu d volj e of) dju gr Je&fofèk;k dk l0;oLFkhdj.k dju d fy; fd; tku oky mik;k ij ljdkj dk lykg nu gr jkT; e mÙkj çns'k fodkl ifj"kn dh LFkkiuk vkj mll lEcfUèkr vkj vkuq"kfxd fo"k;k dh 0;oLFkk dju d fy; vf/kfu;eA

पुरःस्थापित	विधान सभा	28 मार्च, 2006
पारित	विधान सभा	29 मार्च, 2006
पारित	विधान परिषद्	29 मार्च, 2006
राज्यपाल की अनुमति		04 अप्रैल, 2006

राज्य में विनिधानपरक वातावरण तैयार करने, उद्योगों की स्थापना करने, किये गये विनिधान को विशेष प्रास्थिति और प्रोत्साहन देने, औद्योगिकीकरण के लिये व्यवधान और बाधाएं दूर करने और राज्य में विनिधान आकर्षित करने, सरकारी, प्रक्रियाओं को सरल बनाने, श्रम विधियों को युक्तिसंगत बनाने, जिससे राज्य में रोजगार के अवसरों में वृद्धि हो और इससे सम्बन्धित मामलों में उठाये जाने वाले कदमों के

सम्बन्ध में राज्य सरकार को परामर्श देने के लिये राज्य सरकार द्वारा उत्तर प्रदेश विकास परिषद का गठन 15 अक्टूबर, 2003 को किया गया था। भारतीय अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों के अनेक गणमान्य और अग्रणी हस्तियों को परिषद का सदस्य नाम निर्दिष्ट किया गया था। उनसे प्राप्त व्यावहारिक ज्ञान से परिषद राज्य सरकार को समय–समय पर विभिन्न नीति सम्बन्धी सूत्रपात की सिफारिश करती रही है, जिसके आधार पर राज्य सरकार ने राज्य की अर्थ–व्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों के विकास के लिये अनेक नीतियों को शुरू करने की घोषणा की है। राज्य सरकार द्वारा इस नीति सम्बन्धी सूत्र के परिणामस्वरूप वर्ष 2005 की अवधि में तैंतीस हजार करोड़ रूपये की सीमा तक विनिधान के लिये प्रस्ताव आकर्षित करने में राज्य समर्थ हुआ है। जो राज्य के लिये एक कीर्तिमान है। अनेक अन्य राज्यों ने इन नीति सम्बन्धी सूत्रों को अपनाया है। परिषद् द्वारा विचारों की स्वतंत्रता और कार्य करने की स्वायत्तता के कारण परिषद के लिये नई नीतियों की सिफारिश करना सम्भव हुआ है। अतएव यह विनिश्चय किया गया है कि उक्त परिषद् को स्वायत्तशासी प्रास्थिति के साथ एक स्थानीय प्राधिकरण के रूप में भूतलक्षी प्रभाव से स्थापित करने के लिये विधि बनाई जाए जिससे यह राज्य के विकास और उसके हितों के लिये अपने दायित्वों को अधिक प्रभावशाली रूप से निर्वहन करने में समर्थ हो सके।

mÙkj çns'k 'kS{kf.kd
laLFkkvksa esa ços'k
¼vuqlwfpr] tkfr;ksa] vuqlwfpr tutkfr;ksa vkSj vU; fiNM+s oxksZa ds fy;s vkj{k.k½
vf/kfu;e] 2006
¼mÙkj çns'k vf/kfu;e la[;k 23 lu~ 2006½

Hkkjr dk lafo/kku ds vuqPNsn 30 ds [k.M ¼1½ esa fufnZ"V vYila[;d 'kS{kf.kd laLFkkvksa ls fHkUu laLFkkvksa] ftuds vUrxZr futh 'kS{kf.kd laLFkk;sa Hkh gSa] pkgs os jkT; }kjk lgk;rk çkIr gksa ;k xSj lgk;rk çkIr gksa] esa vuqlwfpr tkfr;ksa] vuqlwfpr tutkfr;ksa vkSj ukxfjdksa ds vU; fiNM+s oxksZa ls lacaf/kr O;fDr;ksa ds i{k esa ços'k esa vkj{k.k nsus vkSj mlls lEcaf/kr ;k vkuq"kafxd fo"k;ksa dh O;oLFkk djus ds fy;s vf/kfu;e

पुरःस्थापित	विधान परिषद	22 अगस्त, 2006
पारित	विधान परिषद	23 अगस्त, 2006
पारित	विधान सभा	31 अगस्त, 2006
राज्यपाल की अनुमति		7 सितम्बर, 2006

संविधान के 93वें संशोधन द्वारा राज्य सरकारों को यह अधिकार प्रदान किया गया है कि वे अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और नागरिकों के अन्य पिछड़े वर्गों से सम्बन्धित व्यक्तियों के लिए भारत का संविधान के अनुच्छेद 30 के खण्ड (1) में निर्दिष्ट अल्पसंख्यक

शैक्षणिक संस्थाओं से भिन्न शैक्षणिक संस्थाओं जिनके अन्तर्गत निजी शैक्षणिक संस्थाएं भी हैं, चाहे वे राज्य सरकार द्वारा सहायता प्राप्त हों या गैर सहायता प्राप्त हों, में प्रवेश के सम्बन्ध में विशेष व्यवस्था कर सकती हैं। अतएव यह विनिश्चय किया गया है कि उक्त व्यक्तियों के पक्ष में उक्त शैक्षणिक संस्थाओं में प्रवेश में आरक्षण प्रदान करने के लिए विधि बनाई जाय।

चूँकि राज्य विधान मण्डल सत्र में नहीं था और उपर्युक्त विनिश्चय को कार्यान्वित करने के लिए तुरन्त विधायी कार्यवाही करना आवश्यक था, अतः राज्यपाल द्वारा दिनांक 10 जुलाई, 2006 को उत्तर प्रदेश शैक्षणिक संस्थाओं में प्रवेश (अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और अन्य पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण) अध्यादेश, 2006 (उत्तर प्रदेश अध्यादेश संख्या 2 सन् 2006) प्रख्यापित किया गया।

mÙkj çn'k v/khuLFk lsok p;u vk;kx vf/kfu;e] 2006

¼mÙkj çn'k vf/kfu;e l[;k 1 lu 2006½

v/khuLFk lsokvksa dh dfri; Jf.k;ksa ds fy;s ,d v/khuLFk lsok p;u vk;kx dh LFkkiuk vkj mlls lEc) vkj vku"kfxd fo"k;ksa dh 0;oLFkk djus ds fy;s vf/kfu;e

पुरःस्थापित	विधान सभा	02 जनवरी, 2006
पारित	विधान सभा	02 फरवरी, 2006
पारित	विधान परिषद	15 फरवरी, 2006
राज्यपाल की अनुमति		17 फरवरी, 2006

प्रदेश के शासकीय विभागों में पदों पर नियुक्ति के लिए सुयोग्य, कर्मठ एवं प्रतिभावान कार्मिकों का चयन किया जाना आवश्यक है। कार्मिकों के चयन में चयन की गुणवत्ता, उसकी निष्पक्षता एवं पारदर्शिता बनाये रखना भी आवश्यक है। प्रदेश में संवैधानिक स्तर पर उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग की संस्था विद्यमान है किन्तु उस पर बढ़ते कार्य के दबाव के कारण समूह 'ग' के पदों पर चयन करने में कठिनाई का अनुभव किया जा रहा है। विगत समय में समूह 'ग' के कतिपय पदों पर शासन के सीधे नियंत्रण में चयन की कार्यवाही की जा रही थी किन्तु उससे विभागाध्यक्षों को अपना अधिक समय उक्त चयन की कार्यवाही में लगाना पड़ा। इन समस्त कारणों से समूह 'ग' के पदों पर चयन हेतु एक स्वतंत्र अधीनस्थ सेवा चयन आयोग का गठन नितान्त आवश्यक है अतएव यह विनिश्चय किया गया कि उत्तर प्रदेश अधीनस्थ सेवा चयन आयोग की स्थापना की व्यवस्था करने के लिए एक विधि बनायी जाए।

mÙkj çns'k jktLo lafgrk] 2006

¼m-ç- vf/kfu;e la[;k 8 lu~ 2012½

mÙkj çns'k jkT; esa Hkw&[kkrsnkjh vkSj Hkw&jktLo ls lEcfU/kr fof/k;ksa dk lesdu ,oa la'kks/ku djus vkSj mlls lEcfU/kr ,oa vkuq"kafxd fo"k;ksa dh O;oLFkk djus ds fy;s vf/kfu;e

पुरःस्थापित	विधान सभा	14 सितम्बर, 2006
पारित	विधान सभा	21 सितम्बर, 2006
पारित	विधान परिषद्	10 अक्टूबर, 2006
राज्यपाल की अनुमति		29 नवम्बर, 2012

वर्तमान में उत्तर प्रदेश में राजस्व विधि से सम्बन्धित 39 अधिनियम प्रवृत्त हैं। इन अधिनियमों में से उत्तर प्रदेश जमींदारी विनाश और भूमि व्यवस्था अधिनियम, 1950 और यू.पी. लैण्ड रेवेन्यू ऐक्ट, 1901 महत्वपूर्ण अधिनियम हैं। ब्रिटिश शासन के दौरान अनेक अधिनियम अधिनियमित किये गये थे। उनमें से अधिकतम उपबंध अप्रचलित हो गये हैं। इन अधिनियमनों के कुछ उपबंध एक दूसरे से असंगत हो गये हैं। राजस्व विधि से सम्बन्धित विभिन्न अधिनियमनों में भिन्न–भिन्न उपबन्धों के कारण राजस्व–मुकदमों में अत्यधिक वृद्धि हो गयी है। परिणामस्वरूप राजस्ववाद लम्बी अवधि से निस्तारण के लिये लम्बित हैं। इन परिस्थितियों में इन सभी अधिनियमनों के सुसंगत उपबंधों को एकल अधिनियमन में उपान्तरण सहित समेकित करना आवश्यक हो गया है। अतएव यह विनिश्चय किया गया है कि राज्य में भू–खातेदारों और भू–राजस्व से सम्बन्धित विधियों और उनसे सम्बंधित तथा उनसे आनुषंगिक विषयों को समेकित करने और उनमें संशोधन करने की व्यवस्था की जाय। अतएव उपरिउल्लिखित अपेक्षाओं की पूर्ति के लिए उत्तर प्रदेश राजस्व संहिता, विधेयक, 2006 बनाया गया है।

mÙkj çns'k tufgr xkjUVh vfèkfu;e] 2011

¼mÙkj çns'k vf/kfu;e la[;k 3 lu~ 2011½

jkT; dh turk dks fuf'pr le; lhek ds Hkhrj lsok;sa çnku djus rFkk muls lacaf/kr vkSj vkuq"kafxd fo"k;ksa dh O;oLFkk djus ds fy, vf/kfu;e

पुरःस्थापित	विधान सभा	08 फरवरी, 2011
पारित	विधान सभा	17 फरवरी, 2011
पारित	विधान परिषद्	21 फरवरी, 2011
राज्यपाल की अनुमति		03 मार्च, 2011

उत्तर प्रदेश सरकार के विभिन्न विभागों द्वारा प्रदान की जा रही लोकसेवाओं को प्रदान करने के लिए सामान्यतया कोई समय–सीमा नियत नहीं की गयी थी और न तो निर्धारित समय सीमा के भीतर ऐसी सेवाएं प्रदान करने के लिए समुचित रूप से सक्षम अधिकारी पदाभिहित किये गये थे और न ही उनके उत्तरदायित्व नियत किये गये थे, जिसके कारण राज्य की जनता को कठिनाई का सामना करना पड़ रहा था। अतएव यह विनिश्चय किया गया कि राज्य की जनता को नियत समय–सीमा के भीतर सेवायें प्रदान करने तथा उनसे संबंधित या आनुषंगिक विषयों की व्यवस्था करने के लिये विधि बनायी जाय।

चूंकि राज्य विधान मण्डल सत्र में नहीं था और उपर्युक्त विनिश्चय को लागू करने के लिए तुरन्त विधायी कार्यवाही करना आवश्यक था, अतएव राज्यपाल द्वारा दिनांक 13 जनवरी, 2011 को उत्तर प्रदेश जनहित गारन्टी अध्यादेश, 2011 (उत्तर प्रदेश अध्यादेश संख्या 1 सन् 2011) प्रख्यापित किया गया।

mÙkj çn'k ykdr= lsukuh lEeku vf/kfu;e] 2016

¼mÙkj çn'k vf/kfu;e la[;k 9 lu 2016½

लोकतंत्र सेनानी, जिन्होंने आपातकालीन अवधि (दिनांक 25.06.1975 से दिनांक 21.03.1977 तक) में लोकतंत्र की रक्षा के लिये सक्रिय रूप से संघर्ष किया एवं जो इन कार्यकलापों में भाग लेने के फलस्वरूप मीसा/डी.आई.आर. के अधीन कारागार में निरुद्ध रहे हों, को सम्मान राशि, निःशुल्क परिवहन सुविधा एवं निःशुल्क चिकित्सा सुविधा प्रदान करने और उससे सम्बन्धित या आनुषंगिक विषयों की व्यवस्था करने के लिये अधिनियम

पुरःस्थापित	विधान सभा	6 मार्च, 2016
पारित	विधान सभा	8 मार्च, 2016
पारित	विधान परिषद्	9 मार्च, 2016
राज्यपाल की अनुमति		21 मार्च, 2016

आपातकालीन अवधि (दिनांक 25.06.1975 से 21.03.1977) के दौरान असंख्य व्यक्तियों ने लोकतंत्र की रक्षा के लिये संघर्ष किया था, जिससे कि लोकतंत्र की बहाली हो सकी। आपातकालीन अवधि में लोकतंत्र की रक्षा के लिये सक्रिय रहते हुये संघर्ष करने एवं इसके फलस्वरूप मीसा/डी.आई.आर. में कारागार में निरुद्ध रहे उत्तर प्रदेश के राजनैतिक बन्दियों/लोकतंत्र सेनानियों को प्रतिमाह सम्मान राशि, राज्य सड़क परिवहन निगम की बसों में निःशुल्क यात्रा सुविधा एवं राजकीय चिकित्सालयों में निःशुल्क चिकित्सा सुविधा हेतु वर्ष 2006 में सर्वप्रथम नियमावली बनायी गयी, जो दिनांक 31.03.2007 तक प्रभावी थी। राज्य सरकार की राय है कि उक्त व्यक्तियों को उक्त सुविधायें

प्रदान की जायेंगी। अतएव अब, यह विनिश्चय किया गया है कि एक विधि बनाकर उत्तर प्रदेश के ऐसे व्यक्तियों, जिन्होंने आपातकालीन अवधि (दिनांक 25.06.1975 से दिनांक 21.03.1977 तक) में लोकतंत्र की रक्षा के लिये सक्रिय रूप से संघर्ष किया एवं जो इन कार्यकलापों में भाग लेने के फलस्वरूप मीसा/डी.आई.आर. के अधीन कारागार में निरुद्ध रहे हों, को सम्मान राशि, निःशुल्क परिवहन सुविधा एवं निःशुल्क चिकित्सा सुविधा प्रदान करने की व्यवस्था की जाये।

mÙkj çn'k foRrh; vf/k"Bkuk e tekdrk fgr lj{k.k vfèkfu;e] 2016

¼mÙkj çn'k vf/kfu;e l[;k 16 lu 2016½

वित्तीय अधिष्ठानों में जमाकर्ताओं के हितों का संरक्षण करने और उससे संबंधित या आनुषंगिक मामलों की व्यवस्था करने के लिए अधिनियम

पुरःस्थापित	विधान सभा	4 मार्च, 2016
पारित	विधान सभा	8 मार्च, 2016
पारित	विधान परिषद्	9 मार्च, 2016
राज्यपाल की अनुमति		21 मई, 2016

राज्य सरकार के संज्ञान में यह बात लायी गयी है कि राज्य में वित्तीय अधिष्ठानों द्वारा कपटपूर्ण व्यतिक्रम के बहुत से मामले हैं और ऐसे वित्तीय अधिष्ठान अव्यावहारिक और अव्यवहार्य वापसी का वचन देकर धन प्राप्त कर रहे हैं जिसके कारण मध्यम और निर्धन वर्ग के व्यक्ति ऐसे वित्तीय अधिष्ठानों द्वारा ठगे जा रहे हैं। ऐसे अधिकांश मामलों में वित्तीय अधिष्ठान परिपक्वता पर जमा को वापस करने या ब्याज का भुगतान करने या ऐसे जमा के सापेक्ष कोई विशिष्ट सेवा देने में जान–बूझकर विफल हुए हैं। भारतीय रिजर्व बैंक ने ऐसे जमाकर्ताओं के हितों के संरक्षण के लिए राज्य सरकार को एक विधि बनाने का सुझाव दिया है।

अतएव यह विनिश्चय किया गया है कि जमाकर्ताओं को, जिन्होंने ऐसे वित्तीय अधिष्ठानों में धन जमा किया है, संरक्षण देने के लिए एक विधि बनायी जाये। ≈≈

I nHk xUFkk dh I ph

1. संसदीय पद्धति और प्रक्रिया, लेखक–महेश्वर नाथ कौल तथा श्याम लाल शकधर
2. उत्तर प्रदेश विधान सभा में प्रस्तुत असरकारी विधेयकों का संकलन–सम्पादक–भाल चन्द्र शुक्ल
3. उत्तरशती रजत जयंती विधान मण्डल, उत्तर प्रदेश 1887–2012
4. स्मारिका, उत्तर प्रदेश विधान मण्डल स्थापना, उत्तरशती समारोह, 8 जनवरी, 2003
5. उत्तर प्रदेश विधान सभा की प्रक्रिया तथा कार्य–संचालन नियमावली, 1958
6. उत्तर प्रदेश विधान मण्डल–एक ऐतिहासिक रूपरेखा 1977
7. संसदीय दीपिका, 2008
8. उत्तर प्रदेश विधान सभा–2002
9. उत्तर प्रदेश अधिनियम संक्षेपिका वर्ष 1994, 1995, 2004, 2005, 2006, 2011, 2012, 2016
10. उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत तथा जिला पंचायत अधिनियम, 1961, लेखक–कमल कृष्ण राय
11. उत्तर प्रदेश सहकारी समिति अधिनियम, 1965, लेखक–महावीर सिंह
12. सरकारी गजट, उत्तर प्रदेश